ISSN 2582-0885

# स्रवंति

मासिक पत्रिका

जून : 2023

मूल्य : ₹ 15/-

# స్రవంతి

మాసపత్రిక

జూన్ : 2023

వెల : ₹ 15/-

रांगेय राघव विशेषांक-3

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा-आंध्र प्रदेश तथा तेलंगाणा

(Provincial Branch of Dakshina Bharat Hindi Prachar Sabha, Madras)

(Declared by Parliament as an Institution of National Importance by Act 14 of 1964)

खैरताबाद, हैदराबाद - 500 004, फोन - 040-23316865

Email : dbhpsandhra@yahoo.co.in Website : www.dbhpsapts.com

# प्रचारक कृपया ध्यान दें...

## दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, आंध्र प्रदेश तथा तेलंगाना

## सन् सितंबर 2023 सत्र परीक्षा परीक्षा शुल्क विवरण

| **परीक्षा का नाम**<br>Name of the Exam | **परीक्षा शुल्क - चालू प्रमाणित प्रचारक के लिए**<br>Exam Fees for Chaalu Pramanith Pracharak only | **परीक्षा शुल्क - प्राइवेट परीक्षार्थी के लिए**<br>Exam Fees for Private Candidates |
|---|---|---|
| प्राथमिक/Prathamic | 220 | 270 |
| मध्यमा /Madhyama | 280 | 350 |
| राष्ट्रभाषा/Rashtrabhasha | 360 | 450 |
| प्रवेशिका/Praveshika | 540 | 640 |
| विशारद पूर्वार्द्ध/Visharad Poorvardh | 550 | 670 |
| विशारद उत्तरार्द्ध/Visharad Uttarardh | 550 | 670 |
| प्रवीण पूर्वार्द्ध/Praveen Poorvardh | 580 | 720 |
| प्रवीण उत्तरार्द्ध/Praveen Uttarardh | 580 | 720 |
| **छूट शुल्क विवरण**<br>Exemption Fees Details | | |
| राष्ट्रभाषा (Direct)<br>(परीक्षा + मध्यमा से छूट के लिए) | 720 | 800 |
| प्रवेशिका (Direct)<br>(परीक्षा + राष्ट्रभाषा से छूट के लिए) | 990 | 1090 |
| आसान छूट के लिए | 55 | 55 |

सन् – 2023 सितंबर सत्र (दूसरा सत्र) के लिए

आवेदन पत्र के साथ परीक्षा शुल्क जमा करने की अंतिम तिथी - 15.07.2023

विलंब शुल्क सहित - 25.07.2023

# स्त्रवंति

## मासिक पत्रिका

जून - 2023

ISSN : 2582-0885

वर्ष 68 | केंद्रीय हिंदी निदेशालय, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार के अनुदान से प्रकाशित | अंक 3



*संपादक*

**जी. सेल्वराजन**

*सचिव (प्रभारी)*

**ए. जानकी**

*सह संपादक*

**डॉ. जी. नीरजा**

neerajagurramkonda@gmail.com



**मूल्य : ₹ 15/-**

**वार्षिक शुल्क : ₹ 150/-**

dbhpsandhra@yahoo.co.in

**दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा**
**आंध्र प्रदेश तथा तेलंगाणा**
(Declared by Parliament as an Institution of National Importance by Act 14 of 1964)
**खैरताबाद, हैदराबाद - 500 004.**
**फोन : 040-23316865**
**website : dbhpsapts.com**


**रांगेय राघव विशेषांक - 3**


**संपादकीय**
- ▲ जीवन-जगती रस प्लावित कर — 4

**धरोहर**
- ▲ लोई का ताना (उपन्यास का अंश) — रांगेय राघव — 17
- ▲ आत्माभिव्यक्ति — केदारनाथ अग्रवाल — 28
- ▲ कौआपरी और आशिकतन — बालकृष्ण भट्ट — 22

**वैचारिकी**
- ▲ भाषा और सामाजिक आस्मिता — रवींद्रनाथ श्रीवास्तव — 15

**मध्यांतर**
- ▲ रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव की कविताएँ — 23

**स्मरण में है आज जीवन : 13**
- ▲ रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव : जिसके लिए.... — दिलीप सिंह — 7

**विश्व पर्यावरण दिवस पर विशेष**
- ▲ पृथ्वी-रोदन — हरिवंशराय बच्चन — 43

**ललित निबंध**
- ▲ परमप्रेम रूपा है भक्ति — ऋषभदेव शर्मा — 16

**आलेख**
- ▲ कालजयी रचनाकार रांगेय राघव — पी.ए. राधाकृष्णन — 18
- ▲ हिंदी के लिक्खाड़ लेखक : रांगेय राघव — संगीता शर्मा — 20
- ▲ हिंदी साहित्य के महान साधक : रांगेय राघव — वासुदेवन शेष — 27
- ▲ रांगेय राघव के साहित्य में स्त्री... — राशि सिन्हा — 32
- ▲ धन की अंतहीन लालसा... — नियति कल्प — 34
- ▲ धन-लिप्सा के आगे बौनी होती है... — अनामिका जैन — 38

**अन्वेषी**
- ▲ 'रत्ना की बात' उपन्यास का... — दिवेश कुमार चंद्रा — 29

**गतिविधियाँ** — 44



*'स्त्रवंति' में प्रकाशित रचनाकारों के विचार स्वयं उनके हैं। अतः संपादक का उनसे सहमत होना अनिवार्य नहीं है।*

संपादकीय...

## जीवन-जगती रस प्लावित कर.....

भाषा के माध्यम से ही साहित्यकार अपने भावों और विचारों को सशक्त रूप से अभिव्यक्त कर सकता है। कहने का तात्पर्य है कि साहित्य सृजन के लिए भाषा महत्वपूर्ण उपकरण है। साहित्यकार भाषा की विविध शैलियों को अपनाकर सामाजिक संदर्भों को अभिव्यक्त करता है। समाज-संदर्भित भाषा-रूप का प्रयोग साहित्यकार अपनी रचनाओं में करता है। इसी को सामाजिक शैली की संज्ञा दी जाती है। यह वक्ता-श्रोता के संबंधों पर आधारित होती है।

रांगेय राघव ने भी अपनी रचनाओं में इस सामाजिक शैली का बखूबी निर्वाह किया है। 'लोई का ताना' शीर्षक उपन्यास में कमाल और पंडित की आपसी बातचीत को ही देख लीजिए-

'कहने लगे कबीर का कमाल ही लायक आदमी है, वही कबीर साहब की जगह अब उनके मंत्र का प्रचार कर सकता है?'

'कैसा मंत्र?' पंडा ने पूछा, 'मंत्र का अधिकार तो ब्राह्मण को है!'

'तो तुम्हारी मंत्र परंपरा तुम्हें ही मुबारक हो पंडित! मेरा बाप तो कभी इन चीजों से प्रभावित नहीं हुआ और फिर मैं कैसे होता?'

'क्यों नहीं, आखिर बाप का ही बेटा ठहरा!'

मैंने कहा 'नहीं बाबा! मुझे गद्दी वद्दी नहीं चाहिए। मेरा बाप गद्दीधारियों के ही खिलाफ तो जन्म ज़िंदगी लड़ता रहा।'

रांगेय राघव के साहित्य में भाषा वैविध्य को देखा जा सकता है। वे कभी पात्रों के माध्यम से तो कभी लेखकीय टिप्पणियों से समसामयिक सामाजिक और राजनैतिक विसंगतियों पर प्रहार करते हैं। चुनावी राजनीति का पर्दाफाश करते हुए वे व्यंग्य कसते हैं कि चुनाव में जब व्यक्ति जीत जाता है तो वह मंत्री हो जाता है, नहीं तो नेता बनकर रह जाता है। (बंदूक और बीन, पृ. 10)।

सर्वविदित है कि साहित्यकार सामाजिक सरोकारों और पात्रों के बीच पारस्परिक संबंधों को दर्शाने के लिए मध्यम पुरुष सर्वनामों का प्रयोग करते हैं। अपने से बड़े के लिए प्रायः 'आप' का प्रयोग किया जाता है और बराबर के लिए 'तुम' तथा छोटे के लिए 'तू' का प्रयोग किया जाता है। बड़ा होने से तात्पर्य आयु, पद, यश, शिक्षा, शक्ति, व्यवसाय, अधिकार, गुण आदि से है। आत्मीयतावश भी कभी-कभी 'तू' का प्रयोग किया जाता है। रांगेय राघव के कथा-साहित्य में प्रयुक्त मध्यम पुरुष सर्वनामों का विश्लेषण करने से रोचक निष्कर्ष मिलते हैं।

'नरक' शीर्षक कहानी का घीसा हरदयाल का कर्जदार है। आमदनी की मंदी होने के कारण वह समय पर कर्ज नहीं चुका पाता। अतः लाला हरदयाल गुस्से में दो-चार बातें सुनाता है तो घीसा भी गुस्से से लाल हो जाता है और कहता है - 'देखो लालाजी! सुन रहा हूँ देर से! गाली-गुप्ता करोगे तो हाँ! कोई इज्जत थोड़ी ही बेच दी है!' (देवदासी, पृ.64)। जब वह घर लौटता है तो बीमार पोते को देखकर रुआँसा हो जाता है और बहू की खंगवारी लेकर फिर से लालाजी के पास जाकर याचना करने लग जाता है - 'अजी लालाजी! मर जाऊँगा। जान से ही मर जाऊँगा। तुम्हारी कसम, बुरी मौत मर जाऊँगा। लालाजी तुम्हारे दरवाजे का जस है, जो आया वह खाली हाथ

नहीं लौटा, फिर आज मेरे लिए लालाजी, दया करो...' (वही)। यहाँ पर घीसा लाला हरदयाल से आयु, पद, वर्ग, जाति आदि में निम्न स्तर का होने पर भी गाली सुनकर उनसे गुस्से में बात करता है और याचना करते समय लालाजी कहकर संबोधित भी करता है और 'तुम' का प्रयोग भी करता है।

अशिक्षित पति-पत्नी झगड़ा होने पर एक-दूसरे के प्रति अनादरसूचक 'तू' का प्रयोग करते हैं। 'पंच परमेश्वर' कहानी की फूलो और उसके पति चंदा के बीच अक्सर पैसों को लेकर झगड़ा होता रहता है। गुस्से में चंदा जब कहता है - 'तो मैं कोई राजा नहीं हूँ समझी! तो तू पाँव पसार कर बैठ और मैं दर दर मारा मारा फिरूँ?' (अधूरी मूरत, पृ. 32) तो फूलो कहती है - 'तो तुम मुझे ब्याह कर ही क्यों लाए थे?' (वही)। यह संवाद पति-पत्नी के बीच टकराहट को दर्शाता है।

'प्रवासी' शीर्षक कहानी का गोपालन गरीब ब्राह्मण परिवार का लड़का है। वह मंदिर में पूजा-अर्चना करता है। कोमल पोस्टमास्टर की बेटी है। दोनों के सामाजिक-आर्थिक स्तर में जमीन आसमान का फर्क है। फिर भी गोपालन मन ही मन कोमल को चाहने लगता है। जब इस बात का वृद्ध ताताचारी को पता चलता है तो वह गोपालन को बहुत समझाता है और कहता है, 'तूने आकाश की ओर हाथ बढ़ाया, लेकिन यह नहीं देखा कि तेरे पैरों के नीचे जमीन तक नहीं है! पागल! कोमल से तू विवाह करेगा? मंदिर का अर्चक एक पोस्टमास्टर की पुत्री से विवाह करेगा? घर में तेरे है क्या, जो तू ऐसी मूर्खतापूर्ण बात सोचने लगा?' (वही, पृ. 69)। वृद्ध ताताचारी गोपालन को बेटे के समान मानता है। अतः उसे यह समझाने का प्रयास करता है कि मंदिर के अर्चक किसी अन्य जाति की स्त्री से विवाह नहीं कर सकते। यहाँ तत्कालीन समाज में व्याप्त जातिभेद की ओर इशारा किया गया है। यहाँ ताताचारी द्वारा गोपालन को पागल कहना, और तू का प्रयोग करना इस बात का सूचक है कि दोनों के बीच घनिष्ठ संबंध है।

रांगेय राघव पात्रों के अनुरूप भाषा का प्रयोग करते हैं। यहाँ तक कि भाषिक प्रयोग से पात्रों के स्वभाव को भी जाना जा सकता है। यथा-

**कर्कशता का पाठः**

एक दारोगा अपने स्वभाव और आदत के अनुसार रौब जमाते हुए लोगों के बीच दहशत फैलाता है- 'हरामजादे! जानता नहीं, यह तू ने जेल जाने का काम किया है?' (वही, पृ. 126)

**आक्रोश/ उदासीनता का पाठः**

एक वृद्ध सांप्रदायिक दंगों से उत्तेजित होकर कहता है - 'और देखता हूँ आज हिंदुस्तानी की जवानी की हालत, तो मन करता है नाखूनों से सीना फाड़ कर बाहर नाली में फेंक दूँ' (वही, पृ. 118)। इससे यह स्पष्ट है कि वतन को जान से भी प्यारा समझने वाले व्यक्ति की आँखों के सामने जब वतन पर कोई मुसीबत आती है अथवा दंगों के कारण अशांति फैल जाती है, तो उसका मन तिलमिला उठता है। यहाँ रांगेय राघव ने उस व्यक्ति की बेबसी को दिखाने के लिए 'मन करता है नाखूनों से सीना फाड़ कर बाहर नाली में फेंक दूँ' का प्रयोग किया है।

'हिंदू और मुसलमान होने की वजह से तुम गुलाम नहीं हो, रोटी के गुलाम हो। अगर पेट के बल पर भी तुम एक नहीं हो सकते, तो दुनिया में तुम कभी एक नहीं हो सकते - यानी कभी आजाद नहीं हो सकते' (वही, पृ. 20)। यहाँ लेखक ने अपने पात्र के माध्यम से यह संदेश दिया है कि हिंदू-मुसलमान, सिक्ख-ईसाई के रूप में

अपने आपको देखना बंद कर देना चाहिए। यहाँ हर कोई रोटी का गुलाम है। यदि हम एकजुट होकर आगे नहीं बढ़ेंगे तो हमेशा-हमेशा के लिए गुलामी की जिंदगी जीने के लिए अभिशप्त हो जाएँगे।

'कौन महँगा नहीं हो गया? मैं नहीं हुआ, कि तुम नहीं हुए? अब तो मौत का इतना खरचा नहीं जितना जिंदगी का!' (वही, पृ. 49)। 'क्या बताऊँ? गरीब आदमी हूँ! सुबह ही निकाल जाता हूँ तो साँझ को आता हूँ' (वही, पृ. 46)। इन उक्तियों में एक गरीब की लाचारी व्यक्त हुआ है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि रांगेय राघव ने अपने भाषिक प्रयोग से मानवीय संवेदनाओं को उभारा है। समस्त संप्रेषणपरक उक्तियों को उनके कथा-साहित्य में देखा जा सकता है। कहीं-कहीं चित्रात्मक प्रयोग भी दिखाई देता है। वे पात्र एवं परिवेश के अनुरूप तत्सम शब्दों का जहाँ प्रयोग करते हैं, वहीं तद्भव और देशज शब्दों का भी बखूबी प्रयोग करते हैं। रांगेय राघव का कथा-साहित्य हिंदी के समाज-भाषिक स्वरूप को उद्घाटित करने में सक्षम है। अतः उन्हें संप्रेषणपरकता के कर्णधार भी कहा जा सकता है। मनुष्य और मनुष्यता उनके चिंतन के केंद्र में है। वे मानवीय मूल्यों के पक्षधर हैं। वस्तुतः वे भारतीय साहित्य, संस्कृति और कला के प्रौढ़ चिंतक तथा गहन अध्येता हैं। जीवन-जगती रस प्लावित कर/हम अपना कर अभिलाष काम/इस भेद भरे जग पर रो कर/अब लौट चले लो स्वयं धाम (रांगेय राघव, श्रमिक)

प्रिय पाठकगण! 'स्रवंति' का 'रांगेय राघव विशेषांक-3' अब आपके सामने है। पी. ए. राधाकृष्णन, संगीता शर्मा और वासुदेवन शेष के आलेख रांगेय राघव के जीवन और व्यक्तित्व को उद्घाटित करने में सक्षम हैं। दिवेश कुमार चंद्रा ने अपने आलेख में जीवनीपरक उपन्यास 'रत्ना की बात' का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है तो राशि सिन्हा ने रांगेय राघव के कथा-साहित्य में निहित स्त्री विषयक दृष्टिकोण को रेखांकित किया है। नियति कल्प ने 'आग की प्यास' के समीक्षात्मक अध्ययन से यह निरूपित किया है कि धन की लालसा अंतहीन है, तो अनामिका जैन ने 'पराया' उपन्यास के आधार पर यह स्पष्ट किया है कि धन-लिप्सा के सामने अन्य सभी चीजें गौण हो जाती हैं।

बालकृष्ण भट्ट की जयंती (3 जून) के अवसर पर 'धरोहर' स्तंभ के अंतर्गत उनका व्यंग्य यकौआपरी और आशिकतनन दिया जा रहा है। विश्व पर्यावरण दिवस (5 जून) के अवसर पर हरिवंशराय बच्चन की कविता 'पृथ्वी-रोदन' और केदारनाथ अग्रवाल की पुण्यतिथि पर उनकी कविता 'आत्माभिव्यक्ति' प्रकाशित की जा रही हैं। साथ ही रांगेय राघव के जीवनीपरक उपन्यास 'लाई का ताना' का अंश प्रकाशित है।

ऋषभदेव शर्मा का ललित निबंध 'परमप्रेम रूपा है भक्ति' कबीर जयंती (ज्येष्ठ पूर्णिमा) के अवसर पर प्रकाशित किया गया है। दिलीप सिंह के 'स्मरण में है आज जीवन' की तेरहवीं किस्त (रवींद्रनाथ श्रीवास्तव पर केंद्रित) इस अंक में सम्मिलित है। 'मध्यांतर' में रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव की कविताएँ दी गई हैं

विशेषांक पर आपकी प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा में.....

(सह संपादक)

स्मरण में है
आज जीवन:13

# रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव
## जिसके लिए ग़ज़ल कहूँ/तुझ-सा कोई सनम नहीं

- दिलीप सिंह
निदेशक, लुप्तप्राय भाषा केंद्र, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक - 484886 (मध्यप्रदेश)

सन् 1992। 28 सितंबर से 4 अक्टूबर तक हैदराबाद में एनसीईआरटी की वर्कशॉप थी। केंद्रीय हिंदी संस्थान के हैदराबाद परिसर में। कई लोग भारत भर से आए थे। मैं हैदराबाद में ही था, वेंकटरमण कॉलोनी में रहता था। प्रो. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव वर्कशॉप में दो दिनों के लिए आए थे। 27 की शाम को मैं उन्हें बेगमपेट एयरपोर्ट से घर ले आया। मेरे दोनों बच्चे छोटे थे। श्रीवास्तव जी जब भी हैदराबाद आते दोनों उनकी अटैची के इर्द-गिर्द चक्कर लगाने लगते कि अटैची खुले और इनके लिए कोई उपहार निकले। वे हमेशा बच्चों के लिए 'गिफ्ट' ले आते थे। उस रात खाना-वाना खाकर शाम सिनेमा, लकड़ी का पुल में 'बोल राधा बोल' फिल्म देखने गए। रास्ते में खैरताबाद पोस्ट ऑफिस से दिल्ली घर पर एसटीडी कॉल किया। दूसरे दिन ऑटो से हम दोनों 'संस्थान' पहुँचे थे। उस पूरे दिन उनका दिशा-निर्देश मिला। डॉ. विजयराघव रेड्डी तब 'संस्थान' के केंद्र प्रभारी थे। उन्होंने प्रभारी की मैटाडोर वैन से हमें वापस घर भिजवाया। दूसरे दिन वैन जल्दी बुलवा ली गई थी। उस्मानिया यूनिवर्सिटी 'संस्थान' के पास ही पड़ती थी। पहले वे भाषाविज्ञान विभाग के प्रो. रामाराव से मिलने गए फिर प्रो. रामकृष्ण रेड्डी के यहाँ, वहीं जलपान हुआ। वर्कशॉप में पहुँचते ही उन्होंने सबको रात के खाने पर मेरे घर आने का न्यौता दे दिया। मैं लंच के बाद ही घर आ गया। तैयारी करने। शाम को 8-10 लोग आए - इंद्रसेन शर्मा, सूरजभान सिंह, विजयराघव रेड्डी, शकुंतला रेड्डी, कृष्णकुमार शर्मा, उमाशंकर उपाध्याय (सपत्नी)...। खूब धूमधाम रही।

तय हुआ कि संस्थान की वैन सुबह आकर श्रीवास्तव जी को एयरपोर्ट छोड़ देगी। सुबह ज़ोर की बारिश हो रही थी। उन्होंने बच्चों को एयरपोर्ट ले चलने से मना कर दिया था। मैं उनके साथ गया। तब बेगमपेट एयरपोर्ट पर 'विज़िटर्स' के लिए टिकट लगता था - तीस रुपया प्रति व्यक्ति। हम दोनों हॉल में जाकर बैठे। सामने ही शीशे के दरवाजे से बोर्डिंग के लिए यात्री जाते थे। दायीं ओर की सीढ़ी से ऊपर चढ़ कर लंबी बालकनी से 'विज़िटर्स' विदा लेते थे। जहाज थोड़ी ही दूर पर खड़ा रहता था। बोर्डिंग एनाउंस हुई। श्रीवास्तव जी शीशे के दरवाजे की ओर बढ़े और मैं उन्हें नमस्ते करके सीढ़ी की ओर। वे उस दिन हल्की नीली रंग की पैंट और पीली-नीली धारी वाली टी-शर्ट पहने हुए थे। उन्होंने जहाज की सीढ़ी पर पाँव रखते ही मेरी ओर देख कर हाथ हिलाया, मैंने भी। फिर जहाज के दरवाजे पर पल भर ठिठक कर उन्होंने दो बार हाथ हिलाया और भीतर चले गए। मैं सोच भी नहीं सकता था कि उन्होंने मुझसे हमेशा के लिए विदा ले ली है। यह 30 सितंबर की सुबह थी - नौ बजकर पचास मिनट। 2 अक्टूबर को करीब 11 बजे डॉ. रेड्डी के ऑफिस में फोन आया कि 1-2 अक्टूबर की मध्य रात्रि में

प्रो. श्रीवास्तव का निधन हो गया है। लंबे तीस साल बीत चुके हैं पर लगता है कि कल ही की बात हो कि वे अपनी प्रिय हल्की नीली पैंट और पीली-नीली मोटी धारीवाली टी-शर्ट में जहाज के दरवाजे पर ठहरे मेरी ओर हाथ हिला रहे हैं। यादों में बसे पलों की कोई उम्र नहीं होती। यथार्थ में वे पल जितने महीन होते हैं, स्मृतियों में उससे हजारहा गुना महीन बन कर स्थिर हो जाते हैं।

प्रो. श्रीवास्तव के ऊपर, उनके अकादमिक अवदान पर, हिंदी भाषा के प्रति उनके लगाव पर, बहुत कुछ लिखा जा चुका है, मैंने भी लिखा है। इस समय मेरे स्मरण में उनके जीवन के वे अछूते पहलू करवटें ले रहे हैं जिनका साक्षी मैं और सिर्फ मैं हूँ। उनकी स्मृति के ये महीन पल मैंने आज तक कभी किसी के साथ साझा नहीं किए हैं। लगता है अब कर देना चाहिए फिर पता नहीं मौका मिले न मिले। जिंदगी का क्या ठिकाना !

श्रीवास्तव अपने लेखन, चिंतन, भाषण में अतिशय आचार्यत्व लिखते दिखते हैं। एकदम गुरू-गंभीर। पर अपने निजी व्यवहार में वे बिल्कुल सरल थे। हँसमुख और बच्चों की तरह निश्चछल। खिलखल करके हँसते थे। हँसते समय उनका पूरा चेहरा हँसने लगता था। एक बार बी.एच.यू. के हिंदी विभाग में **विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण** विषय पर संगोष्ठी थी। मैं अमरीकन इंस्टिट्यूट में बनारस में ही था। मुझे भी बुलाया गया था। मेरे स्नेही अध्यापक डॉ. विश्वनाथ मिश्र संयोजक थे। श्रीवास्तव भी आए थे। वे अग्रिम पंक्ति में बैठे थे कि शिवप्रसाद जी ने प्रवेश किया। श्रीवास्तव ने खड़े होकर उनका स्वागत किया। शिवप्रसाद जी ने गदगद होकर उन्हें अंकवार में भर लिया था। दूसरे दिन शाम को विश्वनाथ मिश्र मुझे और प्रो. श्रीवास्तव को अपने घर ले गए। मिश्र जी बनारस के अर्वाचीन इलाके की गली ठठेरी बाज़ार में रहते थे। पुराने पत्थरों वाली तिमंजिला कोठी थी। मिश्र जी ने ऊपरी छत पर एक बड़ा-सा कमरा अपने अध्ययन-लेखन के लिए बनवा लिया था - समझिए 'बारादरी'। मैं अक्सर उनके यहाँ जाता रहता था, मुझे मित्रवत मानते थे गोकि उम्र में श्रीवास्तव जितने ही थे। हम पत्थर की चौड़ी और ऊँची सीढ़ियाँ चढ़ते हुए छत पर पहुँचे। उनकी छत खूब बड़ी थी जिससे गंगा नदी का प्रवाह साफ दिखाई देता था। श्रीवास्तव जी को खुशी से मचलते हुए मैंने पहली बार देखा था। ठठेरी बाज़ार की गलियाँ बनारस की उत्तम मिठाइयों और ठंडाई के लिए प्रसिद्ध हैं। दोनों चीजें आ गईं। ठंडाई में थोड़ी भांग भी थी। उन्होंने खूब मजे ले-लेकर भंग पी ली। वहाँ से रिक्शे पर हम दोनों विजयशंकर मल्ल और बच्चन सिंह से मिलने गए। दोनों ने एक ही परिसर 'निराला निवेश' में पास-पास घर बनवाया था। थोड़ी देर ही श्रीवास्तव से बात करके बच्चन जी बोले - भइया, आज तो श्रीवास्तव जी का रंग ही कुछ और है। श्रीवास्तव जी उन्हें मिश्र जी के यहाँ का किस्सा सुनाने लगे। उस दिन अपनी गंभीरता-वंभीरता उन्होंने ताख पर धर दी थी।

वे साथ निभाना जानते थे। 'जैसा देस वैसा भेस' तथा 'जैसे लोग जैसा व्यवहार' का गुर वे जानते थे। अपने को ढाल लेना उन्हें आता था। दुनिया भर के शीर्ष भाषाविदों के साथ उनकी निकटता थी। ये सभी उनका मान करते थे। भारत आते तो श्रीवास्तव के घर जरूर आते। ये श्रीवास्तव बिल्कुल अलहदा होते थे। पर उनकी भोजपुरिया सहजता उनसे कभी अलग नहीं हुई। पं. विद्यानिवास मिश्र कहा करते थे कि - रवीन्द्र तो काली कमरी हैं, इनके ऊपर तो कोई रंग चढ़ता ही नहीं। आभिजात्य और देशज का ऐसा मेल मैंने आज तक किसी में नहीं पाया है।

उनके रूप के इसी वैशिष्ट्य ने भारत में उन्हें अपार लोकप्रियता अर्जित कराई थी। साहित्यकारों के भी वे प्रिय थे, और भाषाविदों के भी। डॉ. नगेन्द्र भी उन्हें उतना ही चाहते थे जितना नामवर सिंह। निर्मला जैन भी उन्हें मानती थीं और केदारनाथ सिंह भी। शिवप्रसाद सिंह उन पर जान छिड़कते थे और अज्ञेय उनके मुरीद थे। प्रो. एस.के. वर्मा के भी वे स्नेहभाजन थे और पं. विद्यानिवास मिश्र के भी। बी.एच. कृष्णमूर्ति भी उनके निकट थे और डी.पी. पटनायक भी...। ऐसा कौन था जो उन्हें नहीं चाहता था : बाल गोविंद मिश्र, भोलानाथ तिवारी, कैलाशचंद्र भाटिया, विश्वनाथ त्रिपाठी, रमानाथ सहाय, रामदरश मिश्र, विजयेंद्र स्नातक, गोपाल शर्मा... नाम ही नाम हैं जो अपने साथ प्रो. श्रीवास्तव को जोड़ने के लिए आतुर रहते थे। मैंने बहुत निकट से इन सबके साथ उन्हें काम करते, चर्चा करते, योजनाएँ बनाते देखा है। नामवर जी ने श्रीवास्तव की इस सदाशय प्रवृत्ति पर उनसे कहा था कि - श्रीवास्तव, तुम तो सर्वग्राही हो। ये मुस्कुरा कर बोले थे - गनीमत है आपने 'सर्वभक्षी' नहीं कहा। जोर की हँसी गूँजी। ऐसे कितने-कितने किस्सों की यादें मेरी झोली में हैं। और इनसे संबद्ध प्रो. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव की अनंत छवियाँ भी। सबको उकेरने बैठूँ तो पूरी किताब बन जाय। इनमें से एक याद अभी-अभी सिर उठा रही है।

यूजीसी, हिंदी पाठ्यक्रमों में संशोधन करके अखिल भारतीय स्तर पर एकरूपता लाना चाहता था। श्रीवास्तव यूजीसी की उच्चस्तरीय समिति के चेयरमैन थे। बनारस में एक बैठक होनी थी जिसके संयोजक शिवप्रसाद जी थे। तीन दिन की बैठक थी। हिंदी क्षेत्र के सभी प्रांतों से प्रतिनिधि आए थे। श्रीवास्तव तीसरे दिन आने वाले थे। पिछले दो दिनों काफी बहसें हुई थीं, विरोधी स्वर उठे थे। शिवप्रसाद जी विचलित थे। श्रीवास्तव सभा कक्ष के द्वार पर खड़े किसी से बात करने के लिए ठहर गए थे। उनकी आवाज सुन कर शिवप्रसाद जी कक्ष के बाहर निकल आए और श्रीवास्तव का हाथ अपने हाथ में लेकर तेज़ आवाज में बोले - आय गयउ हनुमान। दोनों कक्ष में पहुँचे। अब श्रीवास्तव एकदम भिन्न व्यक्ति थे। वे एक घंटे के ऊपर बोले। ऐसे अवसरों पर उनकी तार्किकता चरम पर पहुँच जाती थी। 'विरोध के लिए विरोध' के स्वर मद्धम पड़ने लग जाते थे। सहमति बन गई। लंच के बाद वहीं बैठ कर उन्होंने एक रिपोर्ट तैयार कर दी, सबको पढ़ कर सुना दी। रिपोर्ट टाइप होकर आई और सभी प्रतिनिधियों ने सहर्ष उस पर हस्ताक्षर कर दिए। कार्य करने की उनकी यह प्रणाली भी सबको मोहती थी।

उनके इस सर्वग्राही और कार्यकुशल रूप के साथ ही मुझे मोहता था उनका दिलकश व्यक्तित्व। जीवन से भरा हुआ। उन्हें ताश के खेल में आनंद आता था। 'रमी' और 'ब्रिज' उनके प्रिय खेल थे, पर वे सबसे ज्यादा मज़ा लेते थे 'फ्लश' खेलने में। यह ताश के तीन पत्तों का खेल होता है। श्रीवास्तव जी इसे 'तिनपतिया' कहते थे। कुछ लोग इकट्ठा होते तो यह खेल जरूर जमता। इसे कई लोग खेल सकते थे। दाँव भी लगाया जाता। उनका मानना था कि 'फ्लश' बिना पैसों का दाँव लगाए खेलना फ़िजूल है। एक खिलाड़ी 'बोर्ड' की तय रकम बीच में रखता। जो बोर्ड रखता वही पत्ते बाँटता। एक के बाद दूसरा बोर्ड रखता। श्रीवास्तव जी के 'फ्लश' में बोर्ड की रकम चार आने मुकर्रर थी। यदि कोई अपना पत्ता तुरंत न देखना चाहे तो तीस पैसे की 'ब्लाइंड' कर सकता था। आगे के लोग भी चाहें तो 35, 40, 45, 50 पैसे तक की ब्लाइंड कर सकते थे। हमारे खेल में 50 पैसे की ब्लाइंड लिमिट थी। ब्लाइंड की रकम की दुगनी रकम की मूव (चाल) होती थी जो पत्ते देखने के बाद कोई चाहे तो चल सकता

था। इस तरह एक रुपये की अधिकतम चाल हो सकती थी। पत्ते देखे जाते - तीन में से दो पत्ते एक ही तरह के हों (जैसे दो सत्ते, दो गुलाम) तो 'पेयर', तीनों पत्ते एक ही रंग के हों तो 'कलर', पत्तों में क्रम हो (जैसे 2,3,4 या गुलाम, बेगम, बादशाह) तो 'रन', यदि क्रम (सीक्वेंस) कलर में हो तो 'कलर सीक्वेंस' और तीनों पत्ते एक ही श्रेणी को हों (जैसे तीन पंजे, तीन बेगमें) तो 'ट्रेलर'। ये इसी क्रम में एक दूसरे से छोटे या बड़े माने जाते थे। चालें चली जातीं। कोई-कोई बीच में ही पत्ते फेंक देता था। आखीर में बचे दो खिलाड़ियों में से कोई एक 'शो' कराता था। जिसका पत्ता बड़ा निकले वह 'बोर्ड' के सारे पैसे जीत जाता था। खेल तेज़ गति का है। श्रीवास्तव जी ने 'फ्लश' खेलने के लिए टिन का एक डिब्बा रखा था जिसमें एक रुपये, अठन्नी, चवन्नी, दस पैसे, पाँच पैसे के सिक्के भरे रहते थे। खेल के समय यह डिब्बा उनके साथ होता था। हम एकाध घंटा खेलते और श्रीवास्तव जी फिर से काम शुरू करने के लिए 'फ्रेश' हो जाते थे।

अपने थके मस्तिष्क को थोड़ा सुकून देने के लिए वे सिनेमा भी देखते थे। हिंदी फिल्में उन्हें बहुत अच्छी लगती थीं। उनके निवास से 'अल्पना सिनेमा' बहुत नज़दीक था - पैदल का रास्ता। हम रात वाला शो देखने जाते। वे कोई भी फिल्म देख लेते थे। कहते थे कि इतने लोगों ने मिल कर इतनी मेहनत से बनाई है। हमें इन्हें अच्छी-बुरी नहीं कहना चाहिए। फिल्म को वे भरपूर एंजॉय करते थे। मैंने उनके और जिज्जी के साथ कई फिल्में देखी हैं। 'शतरंज के खिलाड़ी', 'भूमिका', 'कोरा कागज़', 'सगीना महतो' जैसी वैचारिक फिल्में देख कर वे बहस भी करते थे। सिनेमा के संवादों और गीतों की संरचना पर उनकी विशेष दृष्टि रहती थी। पुरानी हिंदी फिल्मों के कई गीत उन्हें बेहद पसंद थे। सहगल और मुकेश उनके पसंदीदा गायक थे। अपने टेपरिकॉर्डर पर; कभी मूड आता तो इनके कैसेट्स सुनते। सहगल के दो गीतों - सो जा राजकुमारी सो जा और दुख के अब दिन बीतत नाहीं को तो मैंने उन्हें हल्के-हल्के गुनगुनाते हुए भी सुना है। सिनेमा उनके लिए 'रिलैक्स' करने का साधन भी था और विभिन्न कलाओं का समन्वित रूप भी। वे बनारस आते तो पूरे परिवार के साथ एक फिल्म देखने का कार्यक्रम अवश्य बनाते थे। मैंने हैदराबाद, चंडीगढ़ और पुणे में भी उनके साथ हिंदी-अंग्रेजी फिल्में देखी हैं। एक बड़ा रोचक वाकया याद आ रहा है। डॉ. नगेन्द्र अक्सर शाम को 7-7:30 बजे घर पर आ जाया करते थे। निकट में ही रहते थे। उनके पास ड्राइवर-चालित कार थी। एक दिन आए तो हम सब ड्राइंग रूम में बैठ कर 'दूरदर्शन' पर रविवार वाली हिंदी फिल्म देख रहे थे। तब केवल 'दूरदर्शन' ही था। प्रत्येक रविवार को छह से नौ एक फिल्म दिखाता। हम रविवार का इंतज़ार करते। डॉ. नगेन्द्र खड़े-खड़े ही फिल्म का चलता हुआ दृश्य देखते रहे। श्रीवास्तव भी उनके स्वागत में खड़े हो गए थे। बैठते हुए बोले - श्रीवास्तव, तुम हिंदी फिल्में भी देखते हो? श्रीवास्तव जी ने हँसते-हँसते जवाब दिया - डॉक्टर साहब, आपको भी देखनी चाहिए।

प्रो. श्रीवास्तव का एक शौक अनूठा था। वे जब कभी किसी शहर में तीन-चार दिन के लिए जाते थे तो एक शाम वहाँ के मशहूर बाज़ार में जरूर जाते थे। साड़ियाँ खरीदने। साड़ियों की डिज़ाइन, बुनावट और 'कलर कॉम्बिनेशन' की उन्हें जबरदस्त पहचान थी, जैसे भाषा की ध्वनियों की सूक्ष्म पहचान थी। हैदराबाद, बेंगलुरु,

एर्णाकुलम, पुणे, गोवा आदि में मैं उनकी साड़ी-खरीद का साक्षी रहा हूँ। साड़ी के मामले में उनकी रुचि बहुत परिष्कृत थी। वे दो साड़ियाँ खरीदते - एक दीदी (पं. विद्यानिवास मिश्र की पत्नी) के लिए और एक जिज्जी (अपनी पत्नी) के लिए। हैदराबाद से वे नग जड़ी चूड़ियाँ और कंगन भी ले जाते थे। जिज्जी साथ हों तो इस 'शॉपिंग' का मज़ा कई गुना बढ़ जाता था।

वे कॉमिक्स और बाल-पत्रिकाएँ बड़े चाव से पढ़ते थे। उनके दोनों बच्चों ने इनके ढेर लगा रखे थे। मैं बनारस जाता तो दिल्ली-बनारस स्टेशन के बुक स्टॉल से 'पराग', 'नंदन', 'चंपक', 'चंदामामा' के अंक ले आता। नए कॉमिक्स भी। वे अमूमन रात में सोने से पहले इनका थोड़ी देर वाचन करते थे। मज़ा ले-लेकर वे पढ़ते थे इन्हें। संभवतः बातचीत और सरल विवरण की हिंदी का प्रवाही स्वरूप उन्हें इस 'साहित्य' में दिखाई पड़ता था। जब मुझे हिंदी पढ़ाने के लिए फ्रांस जाना था तो उन्होंने मुझे यह सामग्री साथ ले जाने की सलाह दी थी। मैं इन बाल-पत्रिकाओं के थोड़े अंकों के साथ - 'बिल्लू', 'पिंकी', 'मैन्ड्रेक', 'वेताल' और 'अमर चित्र कथा' की कई प्रतियाँ ले गया था। कहना न होगा कि दूसरे वर्ष के विद्यार्थियों को पढ़ाते समय इनमें निहित भाषाई सामग्री ने मेरी बहुत मदद की थी। छात्र इन्हें माँग कर अपने साथ ले जाते और पढ़ने के बाद नई संरचनाओं को मुझसे समझने का यत्न करते। हिंदी कार्यक्रम की निदेशक प्रो. निकोल बलबीर भाषाशिक्षण की इस 'सहायक तकनीक' की प्रशंसा करती थीं और विद्यार्थी भी। मैं श्रीवास्तव को मन ही मन प्रणाम करता।

प्रो. श्रीवास्तव को फोटोग्राफी का भी खूब शौक था। वे साठवें दशक में रूस से एक कैमरा लाए थे जिसमें ऊपर से झाँकते हुए फोटो खींची जाती थी। वे बनारस आते तो इसी कैमरे से हमारे परिवार की फोटो उतारते। सारनाथ, गंगा तट, कहीं भी जाते तो कैमरा उनके साथ रहता। फिर सत्तर के दशक में वे जर्मनी गए तो 'याशिका' का एक बहुत सुंदर-सा 'बॉक्स कैमरा' ले आए थे। चंडीगढ़, हैदराबाद के 'समर स्कूल' में भी यह कैमरा सदा उनके कंधे पर लटका रहता था। उनकी खींची ढेरों तस्वीरें घर के एल्बमों में महफ़ूज हैं। अमरीका से वे एक कैमरा लाए थे जिससे फोटो खींचते ही पट-पट करके फोटो का रंगीन प्रिंट निकल आता था। हमारे लिए वह कैमरा किसी अजूबे से कम नहीं था। फोटो खिंचवाने का शौक उनका पुराना था। उनके एल्बम में उनकी बी.ए., एम.ए. के ज़माने की कई फोटोग्राफ्स स्टूडियो में खिंचवाई हुई हैं - यूनिवर्सिटी के पास लंका इलाके के 'गोरस स्टूडियो' में। पहले स्टूडियो वाले फोटो पर स्टूडियो का नाम उभरे अक्षरों में छाप देते थे। हल्की-सी मूँछ रखे युवा रवीन्द्र इनमें फ्रंट से, साइड से, अंडाकार वृत्त के बीच में, काले बैकग्राउंड से उभरते हुए दिखाई पड़ते हैं। तब फोटोग्राफी का इतना चलन नहीं था। पर श्रीवास्तव जी के विवाह के अनेक चित्र हमारे पास हैं जिन्हें फोटोग्राफी का शौक रखने वाले उनके बड़े भाई ने खींचा था। मेरे घर के फंक्शंस के श्रीवास्तव द्वारा खींचे गए कई चित्र अब मेरी अनमोल धरोहरें हैं - मेरी कितनी-कितनी यादें आबद्ध हैं इनसे।

खेलों में उन्हें क्रिकेट, टेनिस और बैडमिंटन पसंद थे। बैडमिंटन वे खुद बहुत अच्छा खेलते थे। क्रिकेट का मैच वे टी.वी. पर बॉल-टू-बॉल देखते थे। टेनिस के मैच भी वे मन लगा कर देखते थे। क्रिकेट और टेनिस

की सारी बारीकियों से वे वाक़िफ़ थे। जब वे केंद्रीय हिंदी संस्थान, दिल्ली केंद्र के प्रभारी थे तो उन्होंने बड़े वाले बाहरी कमरे में 'टेबल टेनिस' की टेबल लगवाई थी। रोज एक-दो गेम अपने सहयोगियों के साथ खेलते थे। वे जो भी काम करते थे, उसमें एक प्रकार की तन्मयता होती थी, 'पैशन'। लिखते समय उन्हें किसी बात की सुधबुध नहीं रहती थी। यह काम वे भोर में चार बजे से शुरू करते थे। चुपचाप आकर बिना कुछ बोले-बतियाये नाश्ता करते थे फिर उठ कर अपनी स्टडी में चले जाते थे। उनका हस्तलेख बहुत सुंदर और सधा हुआ था। देर तक लिखना हो तो उन्हें सिगरेट और चाय की कई बार दरकार होती थी। कुछ विचारने की प्रक्रिया में ड्राइंग रूम में आकर बैठ जाते। मैं अपनी थीसिस का काम डाइनिंग टेबल पर करता था, जो ड्राइंग रूम के ही एक कोने में लगी थी। चिंतन के इन क्षणों में वे मेरी ओर देखते भी नहीं थे। गुमसुम-से आते, बैठते और गुमसुम-से ही चले जाते। पढ़ना और लिखना उनके लिए साधना का पर्याय थे। उनकी स्टडी में किताबों की खुली 'रैक्स' थीं। किताबों के कवर के रंग तक से वे उनकी पहचान रखते थे। किस रैक के किस खाने में कौन सी किताब, कहाँ रखी है, यह भी उन्हें स्मरण रहता था। किसी किताब के किस 'चैप्टर' में कोई बात कही गई है और वह बात या विचार किस पृष्ठ पर है, यह तक उन्हें याद रहता था। मानो असंख्य किताबें उनके मस्तिष्क में 'फीड' कर दी गई हों। गंभीरता से और मन लगा कर पढ़ना मैंने प्रो. श्रीवास्तव से ही सीखा है। वे कहा करते थे कि कोई कितना पढ़ता है, यह महत्वपूर्ण नहीं है, महत्वपूर्ण है कि वह कैसे पढ़ता है।

उनकी एक खासियत और बहुत याद आती है - उनकी साधारणता। उनकी साधारणता में सुरुचि का मेल रहता था। वे खास मौकों पर सूट-टाई भी पहनते थे। अच्छी ऊनी जैकेट्स भी। सामान्यतः पैंट-टी-शर्ट या पैंट-कमीज पहनते थे। जाड़ों में कोट या जैकेट के नीचे फुलस्लीव स्वेटर। उनके पास विदेश से लाए कपड़े बहुतायत में थे जिन्हें वे बहुत एहतियात से रखते थे। घर पर वे सामान्यतः पट्टेदार पायजामा और सैंडो गंजी पहने रहते थे। कोई परिचित आ गया तो गंजी पर शर्ट डाल लेते थे। कोई और आ गया तो पैंट-शर्ट पहन लेते थे। एक बार हम उनके लिए पूरी बाँह का स्वेटर खरीदने 'कमलानगर मार्केट' गए थे। दिल्ली विश्वविद्यालय के पीछे स्थित यह बाज़ार ही हमारा बाज़ार था। दुकानदार ने एक-से-एक महंगे और स्टाइलिश स्वेटर दिखाने शुरू किए। पर ये एक स्वेटर पर इतना खर्च करने के पक्ष में नहीं थे। खूब बहस-मुहाबिसा हुआ। अंततः एक अतिसाधारण-सा स्वेटर लिया गया क्योंकि बकौल श्रीवास्तव जी - इसे जैकेट या कोट के नीचे ही तो पहनना है।

वे 36 वर्ष की उम्र में प्रोफेसर हो गए थे। जब मैं इसी आयु में प्रोफेसर बना तो बोले - हम भी इसी उम्र में प्रोफेसर बने थे। बरसों बाद तक वे किराए के मकान में रहते रहे। दुनियावी प्रपंचों से वे कोसों दूर थे। 'मैटीरियलिस्टिक' दुनिया उन्हें अपनी ओर खींच ही नहीं पाती थी। किसी ने पीछे पड़ कर उनसे डी.डी.ए. का फ्लैट बुक करवा दिया। बड़े बेमन से उन्होंने फॉर्म भरा यह कहते हुए कि - किराए के मकान में रहिए तो बड़ी शांति रहती है। फ्लैट का नंबर उनके नाम निकल आया। सालों-साल तक उनके पास कार भी नहीं थी जबकि जिसे देखिए वही अपनी कार लिए घूमता था। श्रीवास्तव प्रोफेसर थे तब भी बस में ही चलते रहे। बहुत अर्जेंट हो तो ऑटो कर लें। दिल्ली में मैंने उनके साथ दूर-दूर तक की बस-यात्राएँ की हैं। हाथ में अपना ब्रीफकेस लिए वे

शान से बस में चढ़ते। एक दिन वे किसी वैज्ञानिक संस्थान में व्याख्यान देने गए थे। प्रतिवर्ष जाते थे 'ध्वनिवैज्ञानिक विश्लेषण' की वैज्ञानिक तकनीक पर बोलने। संस्थान के निदेशक श्रीवास्तव को बहुत मानते थे। उनके संस्थान ने निदेशक के लिए नई कार ले ली थी। महिंद्रत्ता जी ने श्रीवास्तव जी से कहा कि वे पहली वाली कार अपने लिए ले लें। कार बहुत अच्छी कंडीशन में है, समझिए नई है। शाम को घर आए। रोज़ की तरह चाय पी। एक सिगरेट जलाई और जिज्जी से बोले कि - हमने एक कार ले ली है। उनकी शरारती मुस्कान बहुत-बहुत दिलकश हुआ करती थी। हम सबको लेकर वे बाहर निकले, हमने चबूतरे से लगी गाढ़े भूरे रंग की चमचमाती 'एंबेसडर कार' खड़ी देखी। कार वास्तव में एकदम नई लग रही थी। निदेशक की कार थी सो उसका बढ़िया रखरखाव होता होगा। जिज्जी ने पूछा - इसका दाम कहाँ से दे आए? कहने लगे - दाम अपनी मर्जी से चुकाना है, फिलहाल चारों व्याख्यान के पैसे महिंद्रत्ता जी के पास छोड़ आया हूँ। पर कार यहाँ तक आई कैसे? बोले - ड्राइवर छोड़ गया है। और यह कहते-कहते बाथरूम में घुस गए। वे विदेश में कार चला चुके थे। एक हफ्ते में ही ड्राइविंग स्कूल से प्रशिक्षण लेकर वे पटु हो गए थे।

कितनी सरलता थी उनमें। निर्लोभ थे वे। दिखावे से दूर। एक रोचक बात कि वे दुकानों पर मोलभाव बिल्कुल नहीं करते थे। उन्हें आता ही नहीं था जबकि जिज्जी मोलभाव करने में पक्की थीं। किसी दुकान पर जब वे यह प्रक्रिया शुरू करतीं तो प्रो. श्रीवास्तव धीरे-से सरक कर दुकान के बाहर निकल आते। आराम से एक सिगरेट पीते। जिज्जी चीजें खरीद कर निकलतीं तो हँसते हुए पूछते - कितना फायदा कमा आईं? इसे लेकर दोनों में मीठी-मीठी बहस होती। एक वाक़या है। ड्राइंग रूम में कालीन नहीं था। दिल्ली में कालीन का फैशन था। कालीन लेने की बात उठती, ये टालते रहते। कभी कोई बहाना, कभी कोई तर्क। दबाव बढ़ने लगा तो मुझसे बोले- कुछ इंतजाम कीजिए। दिल्ली की पॉश कॉलोनियों में भदोही से कालीन बेचने वाले घूमते रहते थे - खासकर छुट्टियों के दिन। भदोही, बनारस के पास कालीन निर्माण का प्रसिद्ध शहर है। रविवार को गेट से 'भदोही की कालीन' की आवाज आई। मैं जाकर कालीन की रिक्शा-ट्रॉली को भीतर ले आया। ट्रॉली पर कालीनों की दस-पंद्रह गाँठे थीं। ड्राइंग रूम में एक-एक कालीन खुलने लगी। दाम सुन कर हमारे होश उड़े जा रहे थे। एक कालीन बिछी तो सबको पसंद आ गई। लाल-काले-सफेद धागों से गज्झिम बिनी हुई। उभरी हुई महीन बुनावट में फूल-पत्ती-कलियाँ उकेरी हुई। जब मोलभाव का समय आया तो 'आप देख लीजिएगा' कह कर श्रीवास्तव जी 'स्टडी' में जा घुसे। दुकानों में मोलभाव के जौहर दिखाने वाली जिज्जी भी उन 'भदेसों' से क्या बतियातीं, वे भी अंदर चली गईं। मैं देर तक तीनों कालीनवालों से 'बनारसी बोली' में तकरार करता रहा। बताये दाम से लगभग आधे पर 'डील' तय हो गई। मैंने स्टडी में जाकर बताया। तब तक सोफा-सेंटर टेबल आगे-पीछे करके कालीन बिछा दी गई थी। कमरा रौशन हो गया था। यहाँ-वहाँ से जो पैसे मिलते थे उन्हें श्रीवास्तव जी किसी फाइल, डायरी या नोट बुक में दबा देते थे। उन्होंने यहाँ-वहाँ से नोट निकाल कर मुझे पकड़ा दिए। दोनों मेरे पीछे-पीछे ड्राइंग रूम में आए। दोनों के चेहरे पर संतोष था। बोले-भाई ! कोई चप्पल पहन कर कालीन पर नहीं चढ़ेगा। खुद चप्पल उतार कर वाया कालीन थोड़ी देर सोफे पर बैठे। मैं और जिज्जी भी बैठे कि वे अंदर गए और सौ-सौ के

पाँच नोट लाकर मुझे पकड़ा दिए कि अपने लिए कमीजें ले लीजिएगा। ऐसी छोटी-छोटी खुशियाँ ही उन्हें बड़ा बनाती थीं। वह कालीन उनके बेटे के बड़े-से फ्लैट में आज भी बंधी रखी है। अभी तक उसका बाल भी बाँका नहीं हुआ है।

इसी किस्म की एक याद और आ रही है। मैं हैदराबाद से दिल्ली गया था। तीन नई बुश-शर्टें ले गया था। बदल-बदल कर पहनता था। एक दिन उन्होंने पूछा कि - खूब नई-नई शर्टें पहन रहे हैं, महंगी लगती हैं। मैंने उन्हें बताया कि हैदराबाद में रेडीमेड कपड़ों की एक चेन खुली है - 'कुमार', उसके यहाँ दस-दस रुपए के फासले पर 35 रुपए से 115 रुपए तक की शर्ट्स मिलती हैं। मेरी शर्टों में एक पैंतालीस की है, एक पचपन की और पचासी की। यानी 185 में तीन शर्टें। उन्हें विश्वास ही न हो। अगली बार जब वे हैदराबाद आए तो मैं उन्हें लकड़ी का पुल के 'शाम सिनेमा' के बगल वाली खुली जगह में खुली 'कुमार' की दुकान पर ले गया। शो-केस में ही हर रेंज की एक-एक शर्ट प्रदर्शित थी मय मूल्य की स्लिप के। हम दुकान के अंदर गए। श्रीवास्तव जी ने अपने लिए 'हायर रेंज' की दो शर्टें खरीदीं। जब इनमें से कोई शर्ट पहनते तो तर्जनी से अपना सीना खटखटा कर घोषणा करते - कुमार शर्ट। कुछ साल पहले हैदराबाद गया था तो लकड़ी का पुल के पास ही एक होटल में टिका था। शाम को टहलने निकला तो देखा शाम सिनेमा तो बंद हो चुका था पर 'कुमार' उसी जगह उसी रूप में स्थापित था। मैं देर तक ' कुमार' के सामने खड़ा रहा। श्रीवास्तव जी उस दिन बहुत याद आए। कोई शर्ट खरीदने का मन नहीं किया।

प्रो. श्रीवास्तव खाने-खिलाने के शौकीन थे। देश-विदेश से उनका कोई परिचित आए तो रात के 'डिनर' पर आमंत्रित होता था। सामान्यतः घर पर खाना-नाश्ता ठेठ भोजपुरिया होता था - पराठा-काले चने की सब्जी, पूड़ी-आलू की सब्जी। ब्रेड-मक्खन-आमलेट भी उन्हें प्रिय था। कभी-कभी ब्रेड के साथ 'सलामी' या 'सॉसेजेस' भी। भारतीय विधि से बनी 'मैक्रोनी' भी वे चाव से खाते थे। नॉन-वेज उन्हें बेहद पसंद था। भोजन में कम-से-कम दो सब्जियाँ अनिवार्य थीं। और 'सलाद' भी। रात के भोजन के बाद वे थोड़ी-सी कॉफी पीते। रेस्त्रां में कभी-कभार ही जा पाते, समय ही नहीं था। फिर भी कनॉट प्लेस का चाइनीज़ रेस्टोरेंट, बस अड्डे के पास वाला तिब्बतन रेस्त्रां और मॉडल टाउन का 'रेगुना' उन्हें प्रिय थे। नाश्ता या भोजन उन्हें पूरे तामझाम के साथ चाहिए होते थे। अच्छी क्रॉकरी, चम्मच-कांटा, डोंगे...। सजी हुई टेबल। एक बार गज़ब हो गया। वे खाने बैठे तो रसेदार सब्जी प्रेशर कुकर सहित बीच में रख दी गई। उन्होंने अनमना हो कर प्रेशर कुकर पर दृष्टिपात किया। फौरन सब्जी डोंगे में ट्रांसफर करके टेबल पर प्रस्तुत की गई। उनके पास दुनिया भर की क्रॉकरीज़ थीं। आइसक्रीम बाउल्स और चम्मच थे। तरह-तरह के शीशे के ग्लास थे जिनमें खास मेहमानों को शराब परोसी जाती थी। खाने-खिलाने, पीने-पिलाने, परोसने-सर्व करने का उनका अपना 'स्टाइल' था। खाना भी वे सलीके से खाते थे, सजा कर, मन लगा कर। कोई काम तो ऐसा हो जिसे वे डूब कर न करते हों। उनकी ये यादें मेरे लिए खुशगवार मौसम की तरह हैं। आती हैं तो बाग खिल उठता है। जैसे बेला, चमेली, मोगरा, गुलाब की बेझरी खुशबू फैल गई हो। बहार आ जाती है। न जाने कहाँ चले गए वे।

श्रीवास्तव बहुत प्यारे थे। कुछ भी पहनते, उन पर जँचता था। हर 'जेस्चर' उन पर फबता था। उनका

सामाजिक व्यवहार उन्हें निखारता था। वे पहले नाम से तो किसी को संबोधित करते ही नहीं थे। हमेशा 'जी' के साथ, चाहे वह आयु और पद में छोटा ही क्यों न हो। औपचारिक शिष्टाचार में वे पारंगत थे। महिलाओं के लिए कुर्सी खिसकाना, उनके लिए कार का दरवाजा खोलना, उन्हें हर तरह से सम्मान देना, उनकी आदत बन चुका था। उद्धत होते, छुद्र व्यवहार करते, किसी का मजाक उड़ाते, किसी की निंदा करते तो मैंने उन्हें कभी पाया ही नहीं। अपनी गरिमा का निर्वाह करते हुए वे दूसरों की गरिमा का ध्यान रखते थे। ये सिर्फ कहने की बातें नहीं हैं, सैकड़ों बार मेरी देखी-सुनी और महसूसी हुई हैं।

जीवंत लेकिन सधा हुआ व्यक्तित्व था प्रो. श्रीवास्तव का। कहीं भी सीवन की उघड़ाई नहीं, धागे की टूटन नहीं। सब कुछ चाक-चौकस मजबूती से सिला हुआ। सजीला-सजीला। चित्ताकर्षक। मोहक। चुंबकीय।

ऐसा व्यक्ति हाथ छुड़ाकर देखते-देखते मेरी नज़रों से ओझल हो गया। हैदराबाद की कार्यशाला तितर-बितर हो गई। दिल्ली के सारे लोग और मेरा परिवार बिना आरक्षण के ही ट्रेन में ठूँस गए। मैं तीन तारीख को पहुँचा। दो अक्टूबर को उन्हें मुखाग्नि दी जा चुकी थी। उनके अंतिम दर्शन भी न कर सका। उसी दिन हम 'फूल' चुनने गए। एक भरे-पूरे व्यक्ति की अस्थियाँ एक पोटली में समा गईं। भस्म अभी गर्म थी। हमारे अश्रु उसे सिक्त करते रहे। चार तारीख को उनकी अस्थियाँ हमने हरिद्वार ले जाकर विसर्जित कर दीं। प्रो. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव जाकर गंगा माता की शीतल गोद में सो गए। वापसी की पूरी यात्रा सन्नाटे में कटी। जैसे हम किसी वीराने से गुज़र रहे हों।

वही वीरानगी आज तलक मेरी ज़हन पर तारी है। इसी आलम में पढ़ता-लिखता रहता हूँ। किसी कल चैन नहीं पड़ता। कभी खुशनुमा यादें आती हैं तो तनिक राहत मिलती है। फूल खिले भी भला कितनी देर रह सकते हैं। कोई किताब, कोई लेख, मेरा छपता है तो एक कसक-सी उठती है कि जो इन्हें देख-पढ़ कर खिल-खिल जाता, उसका साया तो अब मेरे सिर पर रहा ही नहीं। कैसी विकट स्थिति में जीने को विवश हूँ मैं, बीते तीस सालों से।☆

---

**वैचारिकी**

## भाषा और सामाजिक अस्मिता

–रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव

भाषा पर किसी भी बहस की शुरूआत करने से पहले यह जान लेना जरूरी है कि वह एक सामाजिक वस्तु है। मानसिक संकल्पना के साथ-साथ सामाजिक यथार्थ भी है; व्याकरणिक इकाई होने के साथ-साथ वह संस्थागत प्रतीक भी है और संप्रेषण का अन्यतम उपकरण होने के साथ-साथ वह हमारी सामाजिक अस्मिता का एक सशक्त माध्यम भी है। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि हर भाषा एक निश्चित समुदाय के व्यक्तियों को भावना, चिंतन और जीवन-दृष्टि के धरातल पर एक-दूसरे के नजदीक लाती है और उन्हें आपस में जोड़ती और बाँधती है।

ललित निबंध

कबीर जयंती (ज्येष्ठ पूर्णिमा) पर विशेष

# परमप्रेम रूपा है भक्ति

- ऋषभदेव शर्मा
पूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष, द.भा.हिं.प्रभा, हैदराबाद
208ए, सिद्धार्थ अपार्टमेंट्स, गणेश नगर, रामंतापुर, हैदराबाद-500013

भक्ति प्रेम की उच्चतम स्थिति का नाम है। वह परमप्रेम रूपा है। यों भी कहा जाता है कि प्रेम के साथ जब श्रद्धा का योग हो जाता है तो प्रेमी भक्ति की ओर अग्रसर होने लगता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इसकी व्याख्या करते हुए ठीक ही कहा है कि

> "जब पूज्य भाव की वृद्धि के साथ श्रद्धाभाजन से सामीप्यलाभ की प्रवृत्ति हो, उसकी सत्ता के कई रूपों के साक्षात्कार की वासना हो, तब हृदय में भक्ति का प्रादुर्भाव समझना चाहिए। जब श्रद्धेय के दर्शन, श्रवण, कीर्तन, ध्यान आदि से ही आनंद का अनुभव न हो, जब उससे संबंध रखने वाले श्रद्धा के विषयों के अतिरिक्त बातों की ओर भी मन आकर्षित होने लगे, तब भक्ति रस का संचार समझना चाहिए। जब श्रद्धेय का उठना, चलना, फिरना, हँसना, बोलना, क्रोध करना आदि भी हमें अच्छा लगने लगे तब हम समझ लें कि हम उसके भक्त हो गए।"

श्रद्धा और प्रेम का यह दुर्लभ संयोग जिसके अनुभव में आ गया वह ही सच्चा भक्त है। कबीर हों या मीरा, आंडाल हों या रामदासु - उनका जीवन भक्ति के इसी परम प्रेममय स्वरूप का दर्शन कराता है। कबीर के वचन इस परमप्रेम को तरह तरह से समझाने की कोशिश करते प्रतीत होते हैं। कबीर के लिए प्रेम ऐसी ज्योति है जिसके प्रकाशित होने से अनंत योग का जागरण हो जाता है। यह प्रकाश संशय को जड़ से मिटा देता है क्योंकि प्रेम और संशय एक साथ रह नहीं सकते। संशय मिटा तो समझो कि प्रिय आन मिला। यह प्रिय कबीर के लिए दुलहिन आत्मा का कंत राजाराम भरतार है। उसके आने की सूचना मिलते ही भक्त का मन नाचने लगता है, मंगलाचरण गूँजने लगते हैं।

कैसे पाता है कोई कबीर अपने इस भरतार को? प्रेम से। क्या है प्रेम? कबीर बताते हैं कि प्रिय के हिय में प्रवेश के लिए बस एक शर्त है। प्रेमी को केवल इतना करना होगा कि अपने सिर को उतार कर धरती पर रख दे। बहुत नीचा है इस घर का दरवाज़ा, सिर उठा कर आप इसमें घुस नहीं सकते। सिर ज़मीन पर रखा, अहं रहित हुए तो यह दरवाज़ा खुद ब खुद खुल जाता है। विचित्र दरवाज़ा है। साँकल भीतर की तरफ लगी है और खुलता बाहर से है। बाहर से खोलने के लिए ज्ञान काम नहीं आता, पांडित्य का वश नहीं चलता। समर्पण काम आता है, प्रेम के ढाई आखर का एकमात्र मंत्र चलता है।

पंडित-ज्ञानी भला क्या प्रेम करेंगे? वे तो ज्ञान के रास्ते चलते हैं और अज्ञात तत्व को खोजते हैं। कबीर जैसे भक्त प्रेम के रास्ते चलते हैं और खुद को खोकर प्रिय को पाते हैं। भक्ति का मोती डूबने से मिलता है, गहरे

पैठने से मिलता है, किनारे बैठे रहने से नहीं। गहरे पैठोगे, तो ही साक्षात्कार संभव होगा। इस साक्षात्कार का रहस्य भी कबीर संकेत से समझा गए हैं। बस इतना करना है कि अपने अंतर्चक्षुओं को प्रिय मिलन का कक्ष बना लेना है। पुतलियाँ सेज बन जाएँगी। पलकें आप से आप पर्दे गिरा देंगी। इस एकाग्र मनोदशा में ही उस प्रिय को रिझाना है-

पिंजर प्रेम प्रकासिया, जाग्या जोग अनंत
संसा खूटा सुख भया, मिल्या पियारा कंत

यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं
शीश उतारे भुईं धरे, सो पैठे इहि माहिं

पोथी पढि-पढि जग मुआ, पंडित भया न कोय
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय

जिन खोजा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठ
मैं बपुरी बूड़न डरी, रही किनारे बैठ

नयनन की कर कोठरी, पुतली पलंग बिछाय
पलकों की चिक डारिके, पिय को लियो रिझाय ☆

---

**धरोहर : उपन्यास का अंश**

## लोई का ताना

**–रांगेय राघव**

दूर-दूर तक भटकता रहता हूँ। आज प्रकाश मिल रहा है तो उसे पूर्ण अविनासी हो जाने दे। वह प्रेम और संचार में ही मनुष्य को मिलता है। वह रहस्य है और अगम है, सबके परे है, परंतु उसका अंतिम सान्निध्य इस ममता और निष्कलंक प्रेम में ही है। वह भटकन जो इस प्रेम को बुरा कहती थी उसने मुझे संन्यासियों की तरह भीख माँगकर जंगल, वन, ग्राम, पहाड़ों पर ढोंगियों और अतृप्त छटपटाती आत्माओं के साथ घुमाया। यही माया थी। वह अहं ही माया का मूल था। वह माया घृणा का ही परोक्ष रूप थी। उसने सहज सत्य को ढँक लेना चाहा। मैं उस माया को छोड़ आया हूँ। मेरा साईं यह है लोई। वह ठगिनी नैना झमकाकर रोक रही थी। उसने बड़े-बड़े ज्ञनियों को डुलाया है, उसने हाथ की मुट्ठी में सार तत्व को बंद करवाके, त्रिभुवन में चक्कर लगवाए हैं।

आलेख

# कालजयी रचनाकार रांगेय राघव

- पी.ए. राधाकृष्णन

एबीस नेस्ट, रेनट्री अपार्टमेंटस, इल्लथ्थाया, पी. ओ. टेंपिलगेट

तलश्शेरी - 670102 (कण्णूर जिला, केरल)

रांगेय राघव हिंदी साहित्य के विलक्षण कथाकार और कवि थे। वे तमिल भाषी थे, पर उन्होंने अपनी लेखन से हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है। उनका जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा जिले में 17.1.1923 को हुआ। राघव का मूल नाम तिरुमल्लै नंबाकम वीर राघव आचार्य था। उन्होंने अपना साहित्यिक नाम 'रांगेय राघव' रखा। उनके पिता का नाम रंगाचार्य और माता का कनकवल्ली था। उनका विवाह सुलोचना से हुआ था। उन्होंने बहुत कम उम्र पाई, पर इतना प्रचुर लिखा कि कालजयी हो गए। सन् 1942 में बंगाल के अकाल पर लिखी उनकी रिपोर्ताज 'तूफानों के बीच' काफी चर्चित रही। उन्होनें जर्मन और फ्रांसीसी के कई साहित्यकारों की रचनाओं का हिंदी में अनुवाद किया। राघव द्वारा शेक्सपीयर की रचनाओं का हिंदी अनुवाद इस कदर मूल रचना सरीखा था कि उन्हें 'हिंदी के शेक्सपीयर' की संज्ञा दे दी गई।

रांगेय राघव अंग्रेजी, हिंदी, ब्रज और संस्कृत के विद्ववान थे। पर दक्षिण भारतीय भाषाओं- तमिल और तेलुगु का भी उन्हें अच्छा-खास ज्ञान था। हालांकि वे केवल 39 साल की उम्र तक जीवित रहे, पर इस बीच उन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, रिपोर्ताज, आलोचना, संस्कृति और सभ्यता जैसे विषयों पर डेढ़ सौ से अधिक पुस्तकें लिख दी थी। उनके बारे में कहा जाता था कि जितने समय में कोई एक किताब पढ़ता थे, उतने में वे एक किताब लिख देते थे ।

कहा जाता है कि रांगेय राघव के पूर्वज लगभग 300 साल पहले आकर जयपुर और भरतपुर में रहने लगे थे। उनकी शिक्षा-दीक्षा आगरा में हुई। उन्होंने 1944 में सेंट जान्स कॉलेज से स्नातकोत्तर और 1949 में आगरा विश्व विद्यालय से गुरु गोरखनाथ पर शोध करके पीएच. डी. की उपाधि प्राप्त की थी। उनके साहित्य और जीवन दोनों में सादगी को देख जा सकता है।

रांगेय राघव एक ऐसे रचनाकार थे जो समूचे जीवन में न किसी वाद में बँधे, न विधा से। उन्होंने अपने ऊपर मढ़े जा रहे मार्क्सवाद, प्रगतिवाद और यथार्थवाद का विरोध किया। उनके रचनाकर्म को देखें तो स्पष्ट होता है कि उन्होंने अपने अध्ययन से, इतिहास से, मानवीय जीवन से ऊर्जा प्राप्त की है। मनुष्य के दुःख, दर्द, पीड़ा और उस चेतना की जिसके भरोसे वह संघर्ष करता है, अंधकार से जूझता है, उसे ही सत्य माना और उसी को आधार बनाकर लिखा, उसी से प्रेरणा प्राप्त की।

रांगेय राघव प्रेमचंद के बाद हिंदी साहित्य के युग प्रवर्तक लेखक माने गए। उन्हें अपने रचनाकर्म के लिए कई सम्मान मिले, जिन में हिन्दुस्थानी अकादमी पुरस्कार, डालमिया पुरस्कार, उत्तरप्रदेश शासन पुरस्कार,

राजस्थान साहित्य अकादमी सम्मान आदि शामिल हैं। बहुआयामी रचना संसार में (कहानी संग्रह) देवदासी, समुद्र के फेन, जीवन के दान, इंसान पैदा हुआ, साम्राज्य का वैभव, अधूरी मूरत, ऐयाशा मुर्दे, एक छोड़ एक, धर्म संकट, (उपन्यास) मुर्दे का टीला, हुजूर, रत्ना की बात, राय और पर्वत, भारती का सपूत, विषाद मठ, सीध-सादा रास्ता आदि उल्लेखनीय हैं।

रांगेय राघव ने जो चर्चित नाटक लिखें उनमें स्वर्ग का यात्री, घरौंदा आदि हैं तो आलोचना में संगम और संघर्ष, काव्यादर्श और प्रगति, समीक्षा और आदर्श, तुलसी का कला शिल्प उल्लेखनीय हैं। तूफानों के बीच चर्चित रिपोर्ताज है। इन सबके अतिरिक्त भारतीय दर्शन और शेक्सपीयर के साहित्य का उनके द्वारा किया गया अनुवाद भी उपलब्ध है। उन्होंने जर्मन और फ्रांसीसी भाषा से भी हिंदी में अनुवाद किए हैं।

रांगेय राघव ने कहानी, उपन्यास, निबंध, कविता, नाटक, समीक्षा, जीवनी, इतिहास, संस्मरण आदि सभी विधाओं में साधिकार लिखा है। इनके रचना क्षेत्र की तुलना राहुल सांकृत्यायन से की जा सकती है। रांगेय राघव अत्यंत कुशल चित्रकार तथा सुमधुर गायक भी थे।

शैली के ओज और भाषा के प्रवाह के कारण रांगेय राघव हिंदी जगत में सदैव चिरस्मरणीय रहेंगे। भारतीय संस्कृति और समसामायिक स्थिति का मार्कसवादि दृष्टि से विश्लेषण उनकी जागरूकता एवं अध्ययनशील चेतना का परिचायक है। इन्होंने दर्जनों, उपन्यासों और कहानियों में समाज, राजनीति, संस्कृति एवं विविध मानवीय पहलुओं पर विचार व्यक्त किए हैं। ☆

## मात्र सृजनधर्मी लेखक नहीं!

**- सुलोचना रांगेय राघव**

रांगेय राघव मात्र सृजनधर्मी लेखक नहीं थे। सृजन और पांडित्य दोनों में आजीवन उनकी समान गति रही। सृजन की भाँति विचार व शोध के क्षेत्र में भी उनकी रुचि बहुत वैविध्यपूर्ण है। वर्तमान व प्राचीन भारतीय साहित्य और वाङ्मय, इतिहास और संस्कृति, राजनीति और दर्शन से लगाकर विज्ञान और समाजशास्त्र तक के वे गंभीर अध्येता थे। हिंदी के अतिरिक्त संस्कृत और अंग्रेज़ी के गहरे जानकार होने के कारण उन्हें अपने बहुमुखी अध्ययन में सदैव अतिरिक्त सुविधा रही। बचपन में पिता से संस्कृत सीखना प्रारंभ किया था, बाद में पं. बालेश्वर प्रसाद से प्रायः 14 वर्ष तक वे संस्कृत सीखते रहे। अंग्रेज़ी माध्यम से उनकी शिक्षा-दीक्षा हुई थी। स्नातकोत्तर परीक्षा हिंदी विषय लेकर ही उत्तीर्ण की। इसके अतिरिक्त तमिल आदि भी थोड़ी-बहुत समझ लेते थे, बोलना नहीं आता था। अब तक न जाने कितनी बार उन्हें तमिल-भाषी कहा गया है क्योंकि असलियत कम ही लोगों को पता है। गाँव-घर में वे ब्रज भाषा बोलते थे या हिंदी।

आलेख

# हिंदी के लिक्खाड़ लेखक : रांगेय राघव

- संगीता शर्मा
घ.नं.4-7-156/19, छोटा शिव हनुमान मंदिर, भानोदया हाई स्कूल के पास, पांडुरंगा नगर, अत्तापुर, हैदराबाद-500028

रांगेय राघव (17 जनवरी, 1923-12 सितंबर, 1962) का मूल नाम तिरुमल्लै नंबाकम वीर राघव आचार्य था। इन्होंने अपना साहित्यिक नाम रांगेय राघव रखा। वे रामानुजाचार्य परंपरा के तमिल आय्यंगर थे। मूल रूप से इनका तिरुपति आंध्र प्रदेश में निवास स्थान था। गौर वर्ण, थोड़ी लंबी तीखी नाक; हमेशा गांभीर्य मुस्कान ओढ़े रहते थे। यह उनका बाह्य व्यक्तित्व था। हिंदी साहित्य का कोई ऐसा कोना नहीं था जिस पर उन्होंने अपनी छाप न छोड़ी हो।

रांगेय राघव की शिक्षा आगरा में हुई और 1949 में आगरा विश्वविद्यालय से स्नातक कर गुरु गोरखनाथ पर शोध कर पीएच.डी. उपाधि प्राप्त की। उस जमाने में जहाँ 13 वर्ष के बच्चे कंचे व गिल्ली डंडा खेला करते थे, उस समय उन्होंने डंडे की जगह कलम पकड़ी और लिखना शुरू किया। 1942 में बंगाल में बहुत बड़ा अकाल पड़ा। वहाँ की यात्रा के बाद उन्होंने 'तूफानों के बीच' रिपोर्ताज लिखा जो हिंदी जगत में चर्चा का विषय बना। संगीत, चित्रकला और पुरातत्व में भी इनकी विशेष रुचि थी। मात्र 30 वर्ष की आयु में ही उन्होंने150 से अधिक पुस्तकों का सृजन किया। कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, रिपोर्ताज, आलोचना, संस्मरण, संस्कृति और सभ्यता, ऐतिहासिक, चरितात्मक निबंध लेखन के साथ-साथ उन्होंने संस्कृत और अंग्रेजी उपन्यासों का भी अनुवाद किया। यही नहीं बल्कि युनानी, रोमन, ईरानी, यूरोपीय, एशियाई, हेलेनिक और फ्रेंच कथाओं का भी अनुवाद किया। उमड़ते भावों के आवेग में उन्होंने हर विधा में बखूबी लेखन किया है। शेक्सपीयर के 10 नाटकों का हिंदी में अनुवाद भी किया। ऐसा प्रतीत ही नहीं होता कि वे अनुवाद है, बल्कि पढ़ने पर लगता है कि वे कृतियाँ मौलिक हैं। इसीलिए रांगेय राघव को 'हिंदी का शेक्सपियर' भी कहा जाता है। जब देश स्वतंत्रता के लिए संघर्षरत था, ऐसे में उनकी सृजनशीलता ने देश के प्रति निष्ठा जगाने का संकल्प किया उनकी लेखनी का अंकुरण चित्रकला के रूप में प्रस्फुटित हुआ। साहित्य सर्जन भले ही कविता से शुरू हुआ, परंतु उनके लेखन ने मुख्य रूप से गद्य लेखन में ही आकार लिया।

1962 मैं कैंसर से जूझते हुए भी उन्होंने अंतिम क्षणों में कविता द्वारा अपनी रचनाधर्मिता निभाई और 12 सितंबर, 1962 को इस नश्वर संसार को अलविदा कह गए। स्मरणीय है कि ऐसे समय में इनके साहित्य का अवतरण हुआ जिसे भारतीय इतिहास के हलचल का कालखंड भी कह सकते हैं। भारतीय परंपरा विशेषतः साहित्य की परंपरा रही है। अतः रांगेय राघव के लेखन में परंपरा भी मिलती है और उससे अलग हटकर भी। उन्होंने पुरुषसत्तात्मक समाज का ही समर्थन नहीं किया बल्कि स्त्रीपक्ष को भी पूरी बानगी से उभारा। दलित और आंचलिक विमर्श भी अछूता न रहा। उस समय के साहित्य में समाज के पुराने विचारों, स्थितियों, ऐतिहासिक

सभ्यता, पुरानी मानसिकता ही लेखकों का मुख्य दृष्टिकोण होता था। परंतु रांगेय राघव ने नए विचारों का आगाज किया। राजनीतिक और जीवन के सार को बड़े उत्साह और उमंग के साथ अपने नए विचारों तथा नए आयामों के साथ प्रस्तुत किया जिसमें नए और पुराने दोनों का सम्मिश्रण मिलता है। इसलिए वे कहते हैं– खुला रहने दो/बहता है/अनदेखा समीर/काल-कुहर स्पर्श/पर अधीर/खोलो अब पंखुरी/रागिणी मृदु-सूरी माधुरी ! !

1948 में 'मुर्दों का टीला' उपन्यास प्रकाशित हुआ, जो मोहनजोदड़ो सभ्यता और गुरु गोरखनाथ कालीन अंधकार को दूर करने का अद्वितीय प्रयास था। लंका दहन बोलपट के लिए पटकथा, संवाद, गीत लिखे, लेकिन फिल्मी दुनिया उन्हें रास न आई और बैर वापस आ गए।

'घरौंदा' इनका प्रथम प्रकाशित मौलिक उपन्यास है। इस उपन्यास में कॉलेज के जीवन और सभी समस्याओं को लेकर विभिन्न विद्यार्थियों की मनोवृत्ति का उद्घाटन किया गया है। युवक-युवतियों के माध्यम से राघव जी ने नई पीढ़ी के विचारों में व्याप्त खोखलेपन को उभारा है। आज नई पीढ़ी के विचारों में बिखराव और हलचल हैं। इनके अन्य उपन्यास है 'विषाद मठ', 'बोलते खंडर', 'देवकी का बेटा',' कब तक पुकारूँ' आदि। नाटक 'स्वर्ण भूमि की यात्रा','रामानुज' आदि। रिपोर्ताज 'तूफानों के बीच' जो कि काफी चर्चित रहा। तमिल भाषी होने पर भी हिंदी, संस्कृत, ब्रज और अंग्रेजी भाषा पर इनका समान अधिकार था।

1954 में 'अधूरा किला' जो पूर्व नाम था बदलकर 'कब तक पुकारूँ' रखा गया प्रकाशित होते ही उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया। ऐतिहासिक और सांस्कृतिक जीवन पर कई उपन्यास लिखे। रिपोर्ताज, जीवन चरितात्मक उपन्यास और यात्रा गाथा की नई परंपरा का आगाज इन्होंने ही किया और यही सृजनात्मकता प्रेमचंदोत्तर रचनाओं के लिए चुनौती बन गया।

'चीवर' उनका बौद्ध मत पर आधारित सफलतम ऐतिहासिक उपन्यास है। 'प्रतिदान' महाभारत कालीन इतिहास पर आधारित स्वतंत्र मौलिक रचना है। 'अंधेरा रास्ता' तीन खंडों में प्रकाशित की गई है। इसमें दास वृत्ति पर प्रकाश डाला गया है। 'अंधेरे की भूख' में तंत्र-मंत्र, भूत-प्रेत आदि पर भी प्रकाश डाला गया है। यह आपबीती के रूप में लिखी गई रचना है, जिसमें भूत अपनी व्यथा स्वयं कहता है।

रांगेय राघव स्त्री-पक्ष के प्रबल चिंतक थे। स्त्री के कर्मठ, कर्तव्य परायणता और आर्थिक स्वतंत्रता के कट्टर समर्थक थे। 'लोई का ताना' और 'लखिमा की आँखें' उपन्यासों से यह स्पष्ट परिलक्षित होता है। 'हुजूर' उनका व्यंग्यात्मक उपन्यास है। यह कुत्ते की आत्मकथा के रूप में लिखा गया है। इस शैली का यह प्रथम उपन्यास है, जिसमें उन्होंने बताया कि उस समय भारत की दशा कुत्ते की जिंदगी से भी गई बीती थी। उन्होंने हर साहित्यिक विधा पर अमूमन कलम चलाई है। पुरानी लीक पर चलने के बजाय सफल और सकारात्मक बदलाव की ओर ध्यान इंगित किया है। वे कहते हैं कि 'जीवन की विषमताओं को रटना मेरा ध्येय नहीं, बल्कि उन्हें मिटाना ही मेरा उद्देश्य है।'

रांगेय राघव के बारे में यह कहा जाता है कि वे दोनों हाथों से रात-दिन लिखते थे और उनके लिखे ढेर को देखकर समकालीन यह सोचते थे कि वे तंत्र सिद्ध हैं। लिखने से उन्हें कभी ऊब नहीं होती थी बल्कि पूरी तल्लीनता से लिखते थे। इनके विस्तृत रचना संसार को देखते हुए राजेंद्र यादव ने कहा कि रांगेय राघव की तुलना सिर्फ और सिर्फ राहुल सांकृत्यायन से ही की जा सकती है। रांगेय राघव एक ऐसे प्रगतिशील कवि हैं, जो नई पीढ़ी के लिए भी आदर्श हैं। ☆

धरोहर : व्यंग्य

# कौआपरी और आशिकतन

जयंती 3 जून पर विशेष

- बालकृष्ण भट्ट

आज हमारे पंचमहाराज गोपियों में कन्हैया के परतों पर कौआपरियों के बीच आशिकतन बनने की ख़्वाहिश मन में ठान भोर ही को घर से चल पड़े-'मन लगा गधी से तो परी क्या चीज़ है।' यह मत समझो हमारे पंचमहाराज आशिकतनी में किसी से पीछे हटे हुए हैं। घर में चाहे भूँजी भाँग न हो, दिल-दिमाग तो सात ताड़ की ऊँचाई से भी अधिक ऊँचा है। नेवले का सा मुँह सूरत में साक्षात् छाया सुत, किंतु सौंदर्य और हुस्न में कोटि कंदर्प लजावन तरहदारी में मटियाबुर्ज के नौबान किस हकीकत में! अबे ओ खड्डेदार बुल्ले! क्या तुझे भी आशिकतन बनने का हौसिला चर्राया क्या? सूरत लंगूर मगर दुम की कसर है। दुम न हो दुमदार सितारे को नोच कर ला दूँ। अरे ओ बीचुड्डों! अंचनगिरी पर्वत की श्यामता का अनुहार करने वाले तुम्हारे अंग-प्रत्यंग की छवि पर तन-मन सब वारे ये मुफलिस कल्लाच होकर भी आशिकतनों में नाम लिखाए तुम्हारे पीछे खराब खस्ता हैं, तुम्हारे लिए बेकल हैं। इश्क के फंदे में गिरफ़्तार बेबस हैं, असीर हैं, बेकल इतने कि कलकत्ता को कौन कहे कालापानी छान आने पर भी तुम उन्हें अपना दासानुदास चरण सेवक कर लेने को राज़ी हो तो उन्हें कोई उज़्र नहीं है। अब तो इस कूचे में पाँव रख चुके हैं। आशिकों की फिहरिश्त में नाम दर्ज हो गया। लोकनिंदा और बदनामी को कहाँ तक डरें। ओखली में सिर दे मूसलों की धमक से कहाँ कोई बच सकता है। शरम को शहद समझ चाट बैठे। बिना बेहयाई का जामा पहिने आशिक के तन जेब नहीं- 'गाढे इश्क के हैं हम आशिक। तेरी जुदाई में मल-मल के हाथ रहते हैं।' हाय मेरी कौआपरी-कौआपरी-कौआपरी - अफसोस जर दिया जनानों के पास माल न हुआ नहीं तो कौआपरियों की पलटन खड़ी कर हम उसके कपतान बनते या तो शाह वाजिद अली किसी जमाने में हुए थे या अब हमी इस वख्त देख पड़ते। अच्छा तो क्या बिलाई से भैंस लगती हैं किसी मालदार को चलकर फँसावै। ओ हो! आप हैं पंडिअमुक! अमुक! अमुक! बाबू फलां! फलां! फलां! मिस्टर सो एंड सो! *सो एंड सो! सो एंड सो!* लाला साहब वगैरह! वगैरह! ओः खोः! आप क्या हैं बला हैं! करिश्मा हैं! तिलस्मा हैं! फिनामिना हैं! आश्चर्य और अद्‌भुत तथा लोकोत्तर वस्तु का संदोह हैं। उठती उमर और जग जानी जवानी के जोश के उफान में बीबी लोकमोहिक के नवासे हैं। '*चुलबुल चालाक चतुर चरपर छिन छिन में होत।/छैले छबीले छिछोरे ओर छोर के।* '

क्या कहना आप ही तो हैं। भला यह तो कहिए आपने कितने करा-टाप और पदाघात के पश्चात पदाधिरूढ़ हो अनंग अखाड़े की पहलवानी प्राप्त की - सदा शठः शठापालं मल्लो मल्लाय शक्ष्यति।' सींक से पतले आप के भुजदंड आप की पहलवानी की गवाही दे रहे हैं! मुरछल आप हाथ में क्यों लिए रहते हैं? नहीं नहीं यह तो नीम की टेहनी है। क्या कौआपरियों में नवधाभक्ति के साधन का योग सिद्ध हो गया है? 'स्मरणं कीर्तनं विष्णोरर्चनं पादसेवनम्' धनुषकार कमान सी झुकी हुई कमर से भी बोध होता है आपकी तपस्या सिद्ध हो गई, महाप्रसाद पाए गए - लक्षाणामब्दमेकन्तु धूम्रपानमद्योमुखी । / उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा पश्चादुमाख्या सुमुखी जगाम ।। सुमुखी नहीं, सुमुखो कहिए-सुमुख, दुर्मुख, कृष्णामुख, घोड़मुख, लोखरीमुख, बीघमुख-मुख के जितने विशेषण जोड़ते जाइए हम सबका एक-एक उदाहरण आपको देते जाएँगे। गरज कि पंचमहाराज आशिकतनी के महकमे को बीच तक टटोल इसे अथाह और बे ओर-छोर पाय ऊब गए और निश्चय किया कि इन कौआपरियों के फंदे में पड़तन और धन दोनों का तहस-नहस है। ईश्वर शत्रु को भी इनसे बचाए रक्खे, वही सब सोचते-विचारते घर लौटे।

मध्यांतर

# रवीन्द्रनाथ श्रीवस्तव की कविताएँ

भारतीय भाषावैज्ञानिकों में रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव (1936-1992) का शीर्ष स्थान है। उन्होंने भारतीय संदर्भ, विशेषकर हिंदी भाषा को केंद्र में रखकर साहित्य, संस्कृति, शिक्षा और संप्रेषण के बहुविध तथा बहुआयामी पक्षों पर कई प्रसिद्ध पुस्तकें लिखी हैं। उन्होंने हमेशा भाषा को एक प्रतीक व्यवस्था के रूप में मान्यता देते हुए उसे संदर्भ में ही देखने की बात की है।

**वह याद!**

वह याद!
रात्रिमय अवसाद
स्वर कोलाहल पश्चात्
क्षितिज की छाती फोड़
किरण-रज्जु समेत
अचानक
भागा हुआ
अरुणिम प्रात।

**आकांक्षा**

यह अविश्वास!
जलन का ऐसा बलात्कार!
सोचो
समझो
आँखों के किनारे फेंकी
मोतियों की लड़ी परखो!
इन सीढ़ियों की राह
क्षिप्र गति
दौड़ पड़ो।
उत्स से बेखबर
आँखों में उमड़ती
अपने में मचलती
नदी के तट पर
एक नाव होगी तैयार -
कद - छोटा
रंग - काला
आकार - गोला
हल्का सा होगा भार।
चेतन मन का पाल खोल
भावों की डाँड़ ले
कूद पड़ो मँझधार में।
चाँद हँसिया बन
स्वयं खिलखिलाएगा
तुम्हारी नाव से उठा
असफलता का बुलबुला
आएगा
आकर बिखर जाएगा
क्षण में आशा की गोद में
निर्जीव सा ढह जाएगा।
नदी के उस पार
झिलमिलाता होगा

एक अद्भुत अनदेखा देश;
तुम्हारी लालसा
इच्छा-आकांक्षा का
जहाँ आवेश,
थमकर विजयोल्लास में
सिमट-जाएगा
पिघलकर भाप बन जाएगी
द्रोह-विद्रोह का बंधन
अनिच्छा की तुम्हारी कड़ी।
तब -
एक जीवित कथा
फैल जाएगी
प्राची के प्रांगण में
फहराएगा
एक गेरुआ ध्वज,
यही तो है बस
एक आकांक्षा।

**भावातिरेक**

भावातिरेक के क्षण
कुछ काँपती उँगलियों से छूटा
बहकी उलझनों का ढेर
भूखा? नहीं
किसी के अनदेखे भाग्य पर रोया
ढुलका नीर हूँ।
ड्योढ़ी पर ही छूट पड़ा
अर्चना का फूल
असमय ही डाल से टूटा
बिखरा
किसी के भार से कुचला
विवश
एक पँखुरी हूँ।
अगस्त्य का वह रूप
अब कहाँ?
जो सोख ले
किसी की बेबसी पर
विधि की आँखों से छलका
बस इक बूँद
खारा हूँ।

**स्पंदन**

उलझन भरा स्पंदन
हिल कर मचल पड़ा
जल का लघुतम कण।
टूक-टूक हो काँपता जहाँ
हल्दी की पियराई लिए
तरल चादर पर बेचैन
छटपटाता बीमार चाँद।
दूर, परदेश से आती आवाज़
वीणा के झनझनाते तारों में न उलझी जो
बँधती जा रही वही
टूटती चूड़ियों की खनक में आज!

### संदर्भ

बैठा था टी-स्टाल पर
थका हारा
मन से हैरान
दिल से परेशान
आई एक झँझुलाहट
एक रूखी सी प्यास
(फिर क्या?)
दे बैठा चाय का आर्डर।
प्याला लाया
पर लगता ढल आया
(गरम उबलते पानी में)
तेरा टाफी सा रंग।
वही बेचैनी
वही गरमाहट
पीने में वही ओठों में जलन।
अनजाने का झटका
सासर में
प्याले का चाय छलका
(याद आया)
बातों की झकझोर में
बिछल पड़ा था
नयनों का जल
गालों पर!
भाप निकली
अंतः की सैर करने
अचानक मचल पड़ी।
धुँधलका बीच
मन की रेखाएँ
और उसकी सीमा में बँधी
भूली भटकी सी एक तस्वीर
नदी किनारे
साँझ सकारे
आसमान पर फैल गई।
पीछे,
बहुत पीछे
दौड़ा मन।
आया
थक कर लौटा
ओह!
चाय के प्याली
खाली है!

### अचानक की एक मुलाकात

दरस का परस
मिट्टी कुरेद गया
मचल कर रौंद गया
ऊसर-उजाड़ परती
अनगिनत रेखाएँ
अनायास फैला गया
तोड़ते
भुरभुराते

‘फासिले’ बने याद के चट्टान।
निर्लिप्त
निर्विकार
वर्षों दबा रहा
एक बीज हरा,
हाल की नोक से फूट पड़ा
अवरुद्ध चेतन-स्रोत
अंकुर बन निकल पड़ी
सीता सी रत्न-राशि।
(अचानक यह क्या हुआ?)
सींचने जो मचल पड़ा
तोड़ लोरियों का तान
अपनी ही परिधि में सिकुड़ा
अब तक सोया
एक बालक नादान।

**स्वर-संगीत**

फूलों की नैया सुकुमार।
बहा दिया जन-मन के उठते-गिरते वक्षस्थल पर
अंतस्तल का एक स्वर सुकुमार।
कोमलता में मृदुदल
नहीं पर निरीह, अवश या शक्तिहीन
काँटे बन डोल रहे
लोहे के अगणित पतवार।
समय लय पर थिरकता, अभी
जा लगेगा चरण-तट,
अनचाहे ही लिपट सबसे
रूप-पट पर लिखा सुरभि-संदेश
कह देगा गंध भीनी सब बात।
युग-युग का स्वर संघात।

**‘मूड’ और जिंदगी**

मूड तुम्हारी इस बेमानी जिंदगी का
हाँ-नहीं की अनकही बात सा
आघात कर
बिखर कर टूट जाता है
समय के हर अचीन्हे प्रिज़्म पर
रंग! रोशनी का कुँआरा घाव है
चमकती हँसी के बीच
टूटने की क्रिया की अनसुनी आवाज है।
घाव की इस अनसुनी आवाज का
क्या करूँ मैं
मूड के हर प्रिज़्म पर
टूट, सतरंगी छाँव सा जो
फैल जाता किसी की ज़िंदगी पर।

**तुम्हारी याद**

तुम्हारी याद के साये में
सोया यह मन
चिहुँक-चिहुँक उठता है,
लगता है-
देखा है आज भी
कोई भयानक सपना उसने
कि दूर/ बहुत दूर/ खड़ी तुम
पसीने पोंछ रही हो

आलेख

# हिंदी साहित्य के महान साधक : रांगेय राघव

- वासुदेवन शेष

जी 4, अक्ष्या फलैट्स्, 53, इरुसुपा स्ट्रीट, ट्रिप्लिकेन, चेन्नै-600005

हिंदीतर भाषी होते हुए भी बहुत कम उम्र में हिंदी साहित्य भंडार को कविता, कहानी, उपन्यास, निबंध, आलोचना, रिपोर्ताज आदि अनेक विधाओं से समृद्ध करने वाले अमर साहित्यकार रांगेय राघव का जन्म 17 जनवरी, 1923 को आगरा में हुआ और देहावसान 12 सितंबर, 1962 को मुंबई में हुआ। आपका नाम तिरुमल्लै नंबाकम वीर राघव आचार्य था और रांगेय राघव साहित्यिक नाम था।

रांगेय राघव की सृजन प्रक्रिया चित्रकला में बहिर्गत हुई। आपने पहले कविता के क्षेत्र में कदम रखा और मृत्यु पूर्व भी कविता ही लिखी, लेकिन एक गद्य लेखक के रूप में ही अत्यंत लोकप्रियता हासिल हुई। प्रेमचंदोत्तर कहानीकारों और उपन्यासकारों में रांगेय राघव को महत्वेपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है। सन् 1942 में भयानक रूप से अकाल ग्रस्त बंगाल की यात्रा करके 'तूफानों के बीच' शीर्षक से एक रिपोर्ताज लिखा, जिसकी हिंदी जगत में काफी चर्चा हुई। आपने दो तरह के अनुवाद किए - संस्कृत रचनाओं का हिंदी और अंग्रेजी में अनुवाद तथा विदेशी साहित्य का हिंदी अनुवाद। आपकी अनेक कृतियाँ भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनूदित होकर प्रकाशित हुई हैं।

रांगेय राघव अनुवादक के रूप में भी सफल हुए हैं। उन्हें 'हिंदी का शेक्सपीयर' कहा जाता है। वे अनेक सम्मानों से अलंकृत हुए। जैसे – हिंदुस्तानी एकेडेमी पुरस्कार (1951), डालमिया पुरसकार (1954), उत्तर प्रदेश सरकार का पुरस्काकर (1957), राजस्थान साहित्य अकादमी पुरस्कार (1961), महात्मा गांधी पुरस्कार (1966, मरणोपान्त) प्राप्त हुए।

'कब तक पुकारूँ' उनकी सर्वश्रेष्ठ कृति है। इसमें राजस्थान के नटों के जीवन को आधार बनाया गया है ! उपेक्षित, शोषित, दलित, प्रायः निम्न माने जाने वाले नटों के जीवन को रांगेय राघव ने उपन्यास 'कब तक पुकारूँ' का केंद्रीय विषय बनाया है। रांगेय राघव की प्रमुख प्रकाशित कृतियाँ हैं – (उपन्यास) घरोंदा, विषाद मठ, मुर्दों का टीला, सीधा सादा रास्ता, हजूर, चीवर, प्रतिदिन, अंधेरे के जुगुनू, काका, उबाल, पराया, देवकी का बेटा, यशोधरा जीत गई, लोई का ताना, रत्ना की बात, भारती का सपूत, आँधी की नाँवें, अँधेरे की भूख, बोलते खंडहर, कब तक पुकारूँ, पक्षी का आकाश, बौने और घायल फूल, लखिमा की आँखें, राई और पर्वत, बंदूक और बीन, राह न रुकी, जब आवेगी काली घटा, धूनी और धुआँ, छोटी सी बात, पथ का पाप, मेरी भव बाधा हरो,

धरती मेरा घर, आग की प्यास, कल्पना, प्रोफेसर, दायरे, पतझर, आखिरी आवाज। (कहानी संग्रह) साम्राज्य का वैभव, देवदासी, समुद्र के फेन, अधूरी मूरत, जीवन के दाने, अंगारे न बुझे, ऐयाश मुरदे, इन्सान पैदा हुआ, पाँच गधे, एक छोड़ एक। (गाथा) महायात्रा -1, महायात्रा - 2। (रिपोर्ताज) तूफानों के बीच। (काव्य) अजेय खंडहर, पिघलते पत्थर, मेधावी, राह के दीपक, पाँचाली, रूप छाया। (नाटक) स्वर्णभूमि की यात्रा, रामानुज, विरूढ़क। (आलोचना) भारतीय पुनर्जागरण की भूमिका, भारतीय संत परंपरा और समाज, प्राचीन भारतीय परंपरा और इतिहास, प्रगतिशील साहित्या के मानदंड, समीक्षा और आदर्श, काव्य यथार्थ और प्रगति, काव्य, कला और शास्त्र, महाकाव्य विवेचन, तुलसीदास का कला-शिल्प, आधुनिक हिंदी कविता में प्रेम और शृंगार, आधुनिक हिंदी कविता में विषय और शैली, गोरखनाथ और उसका युग (शोध प्रबंध)।

उपर्युक्त लंबी सूची उनकी अभूतपूर्व रचना क्षमता का परिचायक है। रांगेय राघव की रचनाओं में प्रगतिशील विचारधारा के साथ-साथ चिंतन की गतिशीलता स्पष्ट दीखती है। उन्होंने कुछ साहित्यिक कृतियों के उत्तर में अपनी कृतियों की रचना की। जैसे– 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते' के उत्तर में 'सीधा सादा रास्ता', 'आनंद मठ' के उत्तर में 'विषाद मठ', 'कामायनी' के उत्तर में 'मेधावी', 'दिव्या' के उत्तर में 'चीवर' शीर्षक रचनाएँ उल्लेखनीय हैं। रांगेय राघव ने हिंदी साहित्य को समृद्ध किया। हिंदी साहित्य जगत उनके इस अतुलनीय योगदान का सदैव ऋणी और कृतज्ञ रहेगा। ☆

**धरोहर : कविता**

*पुण्यजिथि 23 जून पर विशेष*

## आत्माभिव्यक्ति

**– केदारनाथ अग्रवाल**

मैं आत्मा हूँ
बंद विवर की,
तन नश्वर की।

मुझे चाहिए
मुक्त मेघ के पंख सुनहले
जो न शीत में गलें
ताप में पिघलें
किंतु उड़ें
उड़कर छवि छू लें पहले!!

मैं आता हूँ
सुप्त समय की
हीन हृदय की।
हीन हृदय की।
मुझे चाहिए
सिंधुराज के शंख रुपहले
जो न आज के तजें,

मूर्छना सिरजें
किंतु बजें
बजकर भव भर लें पहले।

अन्वेषी

# 'रत्ना की बात' उपन्यास का विश्लेषणात्मक अध्ययन

- दिवेश कुमार चंद्रा
शोधार्थी, हिंदी विभाग, रूम नं S-1, मिजोरम विश्वविद्यालय, आइजोल, मिजोरम-796004

'रत्ना की बात' रांगेय राघव का सन 1954 में प्रकाशित एक सफल जीवनचरितात्मक उपन्यास है। यह उपन्यास हिंदी कविता के अग्रणी राम भक्त कवि गोस्वामी तुलसीदास के जीवन पर आधारित है। इसमें महाकवि की लोकमंगल भावना को केंद्र में रखने के साथ-साथ तुलसीदास के जीवन संघर्ष को पूर्वदीप्ति शैली में उकेरा गया है। मनुष्य अपने कर्म से महान बनता है। कबीर के समकालीन तुलसीदास16 वीं शती के महान भक्त कवि के रूप में मशहूर हैं। ऐसे महान व्यक्तियों की जीवनी को समाज के सामने रोचकता से प्रस्तुत करने हेतु 'रत्ना की बात' की रचना की गई है। उस समय का समूचा जीवन-चित्र और अनेक प्रश्न सामाजिक, सांस्कृतिक भूमिका को पाठक के मानस पटल पर लाने का कार्य किया गया है।

तुलसीदास के जीवन का अंकन अंतःसाक्ष्य, बाह्यसाक्ष्य तथा जनश्रुतियों के आधार पर ही किया गया है। इसलिए 'रत्ना की बात' उपन्यास सशक्त बन पाया है। इसमें तुलसी के जीवन के अनेक अध्यायों का लेखा-जोखा प्रस्तुत है। कथानक में निम्नलिखित प्रसंग उल्लेखनीय हैं। तुलसी के जन्म से लेकर मृत्यु तक की अथक संघर्ष गाथा में तुलसी का जन्म, माता की मृत्यु, पंडित की भविष्यवाणी तथा तुलसी का परिवारवालों द्वारा त्याग की कथा प्रारंभ में चित्रित है। घरवालों द्वारा त्यागे गए तुलसी समाज के लिए भी हेय पात्र बनता है। सारा समाज उससे घृणा तथा तिरस्कार करता है, परंतु बाबा नरहरिदास तथा गुरु रामानंद की छत्रछाया में तुलसी पढ़-लिखकर सयाना बनता है। गुरु की आज्ञा से रामकथा पाठ गाँव-गाँव में करता जाता है। ऐसे ही एक गाँव में उसकी भेंट रत्नावली से होती है। रत्ना को प्रथम दर्शन से ही तुलसी का चाहना और परिणामस्वरूप उन दोनों का विवाह हो जाना स्वाभाविक ही था। बचपन से ही प्रेम से वंचित तुलसी रत्ना के प्रेम में इतने डूबे रहने लगे कि दुनियादारी की तरफ से भी उन्होंने अपना मुँह मोड़ लिया। पति के इस अत्यधिक प्रेम तथा आसक्ति से रत्ना दुखी है इसलिए वह तुलसी को सचेत करते हुए धिक्कारती है। रत्ना के इस व्यवहार से पीड़ित तुलसी संन्यस्त होकर रहते हैं। इसी अवस्था में अनेक प्रकार की कृतियों का निर्माण करते हैं। जनसामान्य को जनवाणी अर्थात अवधी और ब्रजभाषा में उपदेश देकर रामचरितमानस का पाठ करने लगते हैं। समाज सुधारक तथा प्रेरक के रूप में तुलसी का गोरव बढ़ने लगा। उन्हें लोकनायक, कलिकाल का वाल्मिकी, रामभक्त आदि अनेक उपाधियाँ प्राप्त हुई। वृद्धावस्था के कारण अंत में तुलसी की मृत्यु हो जाती है। परंतु अंत तक तुलसी रत्ना की प्रेरणा को बार-बार स्मरण करते हुए कहते हैं कि तुलसीदास कुछ नहीं है। वह तो रत्ना की बातों का परिणाम है। इस प्रकार तुलसी की संक्षेप में परंतु पूरी जीवनगाथा को लेखक ने अंकित किया है।

उपन्यास के प्रारंभ में तुलसी शिष्य नारायण तथा तुलसी से प्रेम करनेवाले ग्रामवासियों के मध्य दीर्घ संवाद द्रष्टव्य है। इन संवादों से तुलसी की चारित्रिक विशेषताओं को स्पष्टता मिली है। इन संवादों को लेखक ने चार पृष्ठों में चित्रित किया है।' (रत्ना की बात, रांगेय राघव, पृ.8)। वार्तालापों का सार संवाद के एक अंश द्वारा स्पष्ट हो सकता है - 'वह अवतार है भइया, अंश है। उसका काम इस कलियुग में भारतभूमि का उद्धार करना था, सो उसने अकेले ही कर दिखाया...।' (वही, पृ. 11)

'रत्ना की बात' में प्रमुख पात्रों में उल्लेखनीय पात्र दो ही हैं-तुलसी तथा रत्नावली। संपूर्ण कथानक इन दो पात्रों के व्यवहार पर आधारित है। लेखक ने इन दोनों पात्रों के जीवन के क्रमिक विकास को दर्शाया है। तुलसी का चरित्र उपन्यास में उत्तरोत्तर विकसित हुआ दिखाई देता है। गुरुओं की शिक्षा से बने चिंतक तुलसी रत्ना के प्रेम में आसक्त होते हैं। उसका यह रूप भी स्वाभाविक ही लगता है। इस रूप की भर्त्सना न करते हुए लेखक ने उसे स्वाभाविक बताते हुए यह स्पष्ट किया है कि किसी चीज से वंचित रहने पर अचानक ही उस चीज को पाने से उस पर आसक्त होना उचित है इसलिए तुलसीदास को यहाँ दोषी ठहराकर भर्त्सना करना ठीक नहीं है। रत्ना द्वारा तिरस्कृत भावनावश तुलसी आत्महत्या के विचार से प्रवृत्त होता है परंतु तुलसी का विवेकी तथा चिंतक रूप उसे सचेत करते हुए सन्मार्ग पर लाता है। तुलसी का यह आत्मिकविकास दिखाते हुए लेखक ने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। इस प्रकार उपेक्षित से जनसम्मानित, भोगी से महान त्यागी, अज्ञानी से ज्ञानी आदि विविध रूपी तुलसी के दर्शन लेखक ने हमें कराकर तुलसी के चरित्र में निखार लाने का सफल प्रयास किया है।

उपन्यास में रत्ना का चरित्र-चित्रण अत्यंत संक्षेप में परंतु प्रभावी रूप में चित्रित है। रत्ना की चारित्रिक विशेषताओं को उसके पिता द्वारा कहलवाकर लेखक ने स्वाभाविकता लाने का प्रयास किया है। वह धर्मपरायणा, स्वाभिमानी तथा सरल स्वभाव की सामान्य स्त्री थी। तुलसी की महानता के पीछे रत्ना का समर्पण भाव स्पृहणीय है। वह स्वतंत्रचेता तथा स्पष्टवादी भी है। (वही, पृ.88)। उपन्यास के नारी पात्रों में वह एक मात्र सशक्त नारी पात्र के रूप में द्रष्टव्य है। वह सबसे सम्मानित बनकर उपन्यास में छाई है। इसलिए अंत में तुलसीदास भी कह उठते हैं, 'तुलसीदास केवल रत्ना के शब्दों का चमत्कार है।' (वही, पृ.105)

रांगेय राघव ने भूमिका में भी उपन्यास के निर्माण का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए लिखा है - 'तुलसी के सामाजिक कार्य, उनकी भक्ति, उनके सुधार, उनके विद्रोह, उनके विचार, उनका दृष्टिकोण ऐसे विषय हैं जिन पर लोगों का भिन्न मत है। जो तुलसीदास कहते हैं हमें वह देखना चाहिए। उसे समझने के लिए केवल उन्हें देख लेना काफी नहीं है, उनके पूर्ववर्ती युगों को देखना आवश्यक है। तुलसी की भक्ति सामाजिक रूप में वेद, धर्म और व्यक्ति पक्ष में भगवान से याचना थी। तुलसी ने भगवान को आदर्श सामंत राजा के रूप में ही स्वीकार किया...।' (वही, पृ.4)

नायक तुलसी के व्यक्तित्व और कृतित्व को दिखाते हुए उसकी प्रेरणा बनी रत्ना का परिचय देना लेखक का ध्येय था। इसलिए युगों से उपेक्षित रत्ना के साथ यहाँ न्याय किया गया है। तुलसी को महान बनाने में

रत्ना की बात महत्वपूर्ण रही है। रत्ना स्वयं विदुषी थी, कवयित्री थी, नारी जागरण की प्रतिभा थी। तुलसी की पथ-प्रदर्शक बनी रत्ना ने तुलसी का मार्ग प्रशस्त करने की इच्छा से स्व-सुख की बली दे दी। भोगी को योगी अवस्था तक पहुँचाकर स्वयं उपेक्षित रही। उसके इस त्याग भावना तथा महानता को पाठकों तक पहुँचाने का उद्देश्य भी महत्वपूर्ण है। (वही, पृ.5)। उपन्यास में रत्ना का प्रवेश कुछ समय के लिए ही हुआ है, परंतु सारे उपन्यास पर उसकी छाया मँडराती है। कोमल और स्नेहपूर्णा रत्ना तुलसी को सन्मार्ग पर लाने तथा लोक-कल्याण का मार्ग प्रशस्त करने के लिए ही कटुक्तियों का सहारा लेती है। इस वाक् बाण से आहत तुलसी फिर से ईश्वर-भक्ति में तल्लीन होते हैं। अर्थात कहना यह है कि प्रारंभ में तुलसी ने सभी प्रकार का वेदाध्ययन, ज्ञानार्जन किया था। परंतु स्नेह से वंचित तुलसी को रत्ना के प्यार ने कुछ देर तक मोहित किया परंतु उनका असली रूप तो भक्त का ही था। इस दृष्टि से देखा जाए तो रत्ना की बात तुलसी को जगाने का एक साधन रहा है, साध्य नहीं। परंतु उपन्यास में मरणासन्न तुलसी के द्वारा शीर्षक की सार्थकता स्पष्ट करते हुए लेखक ने रत्ना और तुलसी के संवाद दिए हैं ... वे पूछते हैं, 'रत्ना क्यों आई हो?' 'वह देखने आई हूँ, जिसके लिए आपको मैंने अपना वर चुना था।' 'मेरी सत्ता से आप अपनी महानता को भूल गए थे। मैंने अपनी बलि देकर आपको फिर महान पथ पर खड़ा कर दिया। आपको मुझ पर क्रोध तो नहीं है?' 'नहीं रत्ना! तुलसीदास कुछ नहीं है, वह तो केवल रत्ना के शब्दों का चमत्कार है।' (वही, पृ.133)

इतिहास या चरित्रों में चित्रित तुलसी के सभी मानवेतर गुणों को सहज, स्वाभाविक रूप में चित्रित कर उसे केवल महामानव के रूप में प्रस्तुत करना भी लेखक का उद्देश्य रहा है। वैसे किसी भी महापुरुष की जीवनी में अनेक किंवदंतियाँ होती हैं। जीवनचरितात्मक उपन्यासकार इन किंवदंतियों से युक्त कथाओं से तथ्य निकालकर पाठकों के सामने लाने का प्रयास करता है। कवि तुलसी, भक्त तुलसी, आसक्त तुलसी, विरक्त तुलसी आदि तुलसी के अनेक रूपों के दर्शन उपन्यास के द्वारा कराना लेखक का लक्ष्य रहा है। 'रत्ना की बात' शीर्षक संक्षिप्त है, आकर्षक है, कथावस्तु से संबंधित भी है, परंतु कथाबीज और उसके विकास के दौरान यह शीर्षक उचित नहीं लगता। 'रत्ना की बात' शीर्षक को उचित मानने का अर्थ यह भी हो सकता है कि तुलसी स्वयं कुछ भी नहीं थे। और यह बात संभव नहीं है। इसलिए प्रस्तुत उपन्यास का शीर्षक उतना सार्थक प्रतीत नहीं होता जितना की अन्य उपन्यासों का। ☆

---

मैं वर्ग के अनुसार व्यक्ति को देखता हूँ। मुँह से राम-राम करके बगल में छुरी गोदते रहनेवाले के प्रति आप संदेह न करें, मुझे कोई सहानुभूति नहीं। मुझे भौतिकवादी कल्याण ही सबसे बड़ा दिखाई देता है। मज़दूर तनख़ा बढ़वाना चाहते हैं। आप अगर अध्यात्मवादी हैं तो भजन करिए और उन्हें उनका दे दीजिए पर यह आपको कभी मंजूर नहीं। यदि यह भारतीय संस्कृति के विरुद्ध है तो मैं क्या करूँ? भूखे भजन न हो गोपाला, पुरानी कहावत है। मुझे उस दयालुता पर श्रद्धा नहीं जिसकी सामर्थ्य शोषक पर टिकी है।

– रांगेय राघव, सीधा-सादा रास्ता, पृ.248

आलेख

# रांगेय राघव के साहित्य में स्त्री विषयक दृष्टिकोण

- राशि सिन्हा

द्वारा प्रवीण कुमार, यूनियन बैंक ऑफ इंडिया
प्लाट नं. 1129, रोड नं. 36, जुबली हिल्स, माधापुर, हैदराबाद-500033

विलक्षण प्रतिभा के धनी, हिंदी साहित्य के अनन्य साधक, रांगेय राघव मूल रूप से तमिल ब्राह्मण थे, जिनका मूल नाम तिरुमिल्लै नंबाकम वीर राघव आचार्य था। महज 13 वर्ष की आयु में लेखन कला की शुरूआत करने वाले, बेहद लिक्खड़ लेखकों में शामिल, हिंदी के उपासक, रांगेय राघव ने प्रायः सभी विधाओं पर अपनी तीक्ष्ण दृष्टि से आबद्ध, किंतु संवेदनशील लेखनी चलाई और कुल मिलाकर 150 से अधिक पुस्तकें लिखीं जिनमें अपने समय की समस्त चेतनाओं की खुलकर अभिव्यक्ति की, चाहे वह सामाजिक हो या फिर राष्ट्रीय–धार्मिक-ऐतिहासिक ज्ञान चेतना।

बात जब चेतना की हो तो रांगेय राघव के साहित्य के बहु-विषयक विस्तृत क्षेत्र में मूल रूप से कथा-कहानी-साहित्य-सृजन में व्याप्त नारी चेतना से संपृक्त विभिन्न पहलुओं की पारदर्शी अभिव्यक्ति और उनमें उपस्थित स्त्री विमर्श के तत्वों - यथा -स्त्री जीवन का संघर्ष, पीड़ा, छटपटाहट, मानसिकता के दस्तावेजों के अंकन को दरकिनार नहीं किया जा सकता है।

अपने युग के साथ-साथ, सभी युगों की धड़कनों को पूरी संवेदनशीलता से महसूस करने वाले, रांगेय राघव के साहित्य में 'आधुनिक स्त्री–विमर्श' के पदार्पण के बहुत पहले से ही मानवीय संवेदना में स्त्री-विमर्श के प्राण तत्व मौजूद थे। हिंदी साहित्य के इस सचेत और संवेदनशील साहित्यकार ने स्त्री-विमर्श के नाम पर देह केंद्रित और परंपरागत पितृ सत्तात्मक मूल्यों की समीक्षात्मक अभिव्यक्ति की चेष्टा नहीं की है, बल्कि एक विवेकशील चिंतक के रूप में यथार्थ से जुड़े, सभी वर्गों और जातियों की स्त्रियों के भीतर पल रहे, और समय-परिस्थितियों के साथ उन प्रश्नों में आए बदलाव को समझ कर, महसूस कर, साहित्य में प्रामाणिक, विश्वसनीय और कलात्मक लड़ियाँ पिरोते रहे।

रांगेय राघव स्त्री विमर्श के नाम पर देहमुक्ति की कथा नहीं लिखते, वरन् इस संदर्भ में निरंतर परिपक्वता की ओर बढ़ता उनका साहित्य अपने समय और समाज की सीमाओं से उबरने की स्त्री मन की अभिलाषाओं, भीतर के द्वंद्व, कुंठाओं, उनके उत्थान और अधिकारों के गहरे आत्मसंघर्षों को जीवन के यथार्थवाद से जोड़कर अपनी कथा-कहानियों में, उल्लेखित स्त्री-पात्रों के माध्यम से उसका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करते नजर आते हैं। इस क्रम में वे अपनी कहानियों में हमेशा एक मजबूत स्त्री पात्र गढ़ते थे, जिनके इर्द-गिर्द पूरा का पूरा कथानक घूमता रहता था। ऐतिहासिक सभ्यता पर आधारित उनका काल्पनिक उपन्यास 'मुर्दों का टीला' हो या फिर स्त्री के चिंतन संसार को दर्शाती उनकी अन्य कृतियाँ,-'राह न रुकी' तथा 'रत्ना की बात' में वर्णित स्त्री पात्र हों या 'कब तक पुकारूँ' की कजरी, पियारी,चंदा और सूजन हों। ये सभी राघव जी के रचना संसार में बुनी गईं सशक्त स्त्री पात्र हैं जिनके माध्यम से उन्होंने समाज के यथार्थ को उद्घाटित किया है।

रांगेय राघव की गहरी स्त्री चेतना का परिचय देती उनकी सर्वश्रेष्ठ कहानी 'गदल' का केंद्रीय चरित्र गदल, खारी गूजर वंश की 45 वर्षीय स्त्री पात्र है जो मुखर होने के साथ ही, दृढ़ और निर्भीक है। उसकी विशेषता यह है कि वह किसी भी रूढ़ि-मान्यताओं को उसके प्रचलित अर्थों में समझकर अनुसरण करने का विरोध करती है। अपने देवर डोडी से अथाह प्रेम के बावजूद वह अपने पति की मृत्यु के बाद अपने आत्मसम्मान को महत्व देती है और प्रेमी के सामने क्षमा याचना करने के बजाय कठोर शब्दों में प्रतिवाद कर अपने प्रेमी डोडी को किसी आगत अनहोनी की चेतावनी देकर लौहारे मौनी संग रहने लगती है और सार्वजनिक रूप से इस पीड़ा का ढिंढोरा पीटने से भी गुरेज नहीं करती–'बताओ पटेल, जब वह ही मेरे आदमी के मरने के बाद, मुझे न रख सका तो क्या करती।' उग्र स्वभाव की गदल, प्रेम में रोष और आत्मसम्मान को आगे रखती है। उसके भीतर के मनोवेग, प्रचंड बवंडरों से घिरे रहते हैं, फिर भी वह स्त्री विपत्तियों का सामना बेखौफ होकर करती है, बिना कुछ सोचें।

'राह न रुकी' शीर्षक उपन्यास की मुख्य स्त्री पात्र 'वसुमती' के माध्यम से, रांगेय राघव ने महज ब्राह्मण संस्कृति को ही तगड़ी चुनौती देते नहीं दिखते, बल्कि जैन साहित्य में साध्वी के रूप में ख्याति प्राप्त स्त्री चंदन बाला को केंद्र में रखकर राज्य की सीमाओं में व्याप्त धार्मिक-सामाजिक चेतना का ताना बाना बुन व्यक्ति स्वातंत्र्य के केंद्र में स्त्री स्वातंत्र्य की पुरजोर वकालत करते दिखाई देते हैं। अपने समय से इतर सोचने वाले, राघव ने चंदना के माध्यम से बुद्ध और महावीर युग के स्त्री-द्वंद्व को, उसके मनोवैज्ञानिक आत्मसंघर्ष को बड़ी बारीकी से समझ, उस युग की नारी केंद्रित समस्याओं को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है।

उनका बहुचर्चित उपन्यास, 'कब तक पुकारूँ' की कहानी ऐसे तो मुख्य पात्र, करनट जाति के घुमंतु नृत्य करतब से पैसे कमाने वाला गरीब, सुखराम के चहुँ ओर घूमती है, किंतु उपन्यास में उल्लेखित नारी पात्रों - कजरी, पियारी, चंदा और सूजन के माध्यम से उन्होंने स्त्री-समस्याओं को, उस समय के समाज में प्रचलित स्त्री जीवन के व्यावहारिक दृष्टिकोणों को शब्दों का जामा पहनाकर स्त्रियों के मानसिक दस्तावेज को पाठकों के सम्मुख रखते नजर आते हैं।

कुशल कथाशिल्पि रांगेय राघव पाठकों की अपेक्षाओं को बखूबी समझते हैं। स्त्री विमर्श के मुद्दे को उद्धृत करने के क्रम में क्रमिक चारित्रिक उद्घाटन, कथा की सूक्ष्म व्यंजनाओं को प्रमाणिक रूप से उभारते रहते हैं ताकि पाठक शब्दों की जकड़बंदी और स्त्री समस्याओं की गंभीरता में जकड़कर न रह जाए और यह सब उसके लिए उबाऊ न बन जाए। अतः बीच बीच में दृश्यात्मक-नाटकीयता और चुटीले संवादों से यह कुशल शिल्पी पाठकीय कौतूहल बनाए रखते हैं।

चाहे कथा-कहानी, उपन्यास हो या साहित्य की कोई भी विधा, रांगेय राघव का विपुल साहित्य-संसार, चिंतन और सर्जना के तहत न सिर्फ नारी-अस्मिता की चर्चा भर ही करता प्रतीत न होता है, बल्कि उसके अस्तित्व को स्वीकार कर वैयक्तिक स्वतंत्रता के पक्ष में, उसके हक में शोषण-उत्पीड़न के विरुद्ध युगीन प्रश्नों को उठाकर, समाज में स्थापित करने को आतुर भी दिखाई देता है। स्त्री को महज देह के रूप में देखने की समाज की जिद को स्त्री-अस्तित्व-मूल्यांकन की दृष्टि प्रदान करता है, और साथ ही स्त्री पात्रों के माध्यम से कथानक के संवाद-संयोजन से वे समाज को यह बताने की भी कोशिश करते हैं कि स्त्री कारण व कारक ही नहीं 'कर्ता' भी हो सकती है। रांगेय राघव का साहित्य स्वयं को सिर्फ स्त्रीवाद के मुहावरे से जोड़कर नहीं रखता बल्कि उसके अस्तित्व और नैतिकता को लेकर समाज में जो व्याप्त अंतर्विरोध है उसके तमाम स्तरों पर संवाद स्थापित करता है। साहित्य में स्त्री विमर्श के प्राण तत्वों को स्थापित कर आनेवाले साहित्यकारों-चिंतकों के लिए मार्ग भी प्रशस्त करता है, जिसे आज के साहित्य में व्याप्त स्त्री विमर्श के परिप्रेक्ष्य में आसानी से देख सकते हैं।☆

आलेख

# धन की अंतहीन लालसा : 'आग की प्यास'

- नियति कल्प

सहायक प्रोफेसर, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग,
राँची विश्वविद्यालय, राँची, झारखण्ड

प्रेमचंदोत्तर युग के रचनाकारों में रांगेय राघव का नाम अत्यंत सम्मानित और प्रतिष्ठित है। बहुमुखी प्रतिभा के धनी रांगेय राघव ने मात्र 39 वर्ष के अपने अल्पकालीन जीवन में अपनी सशक्त लेखनी से विविध विधाओं में 150 से अधिक पुस्तकों का लेखन कर हिंदी साहित्य को समृद्ध किया। हिंदुस्तानी एकेडेमी पुरस्कार, डालमिया पुरस्कार, उत्तर प्रदेश शासन पुरस्कार, राजस्थान साहित्य अकादमी पुरस्कार और महात्मा गांधी पुरस्कार से सम्मानित रांगेय राघव की भूमिका हिंदी साहित्य में इसलिए भी महत्त्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि वे हिंदीतर (तमिल) भाषी थे। हिंदी के प्रति उनके सच्चे प्रेम को व्यक्त करते हुए उनकी पत्नी सुलोचना राघव ने लिखा है - 'मेघदूत के सचित्र हिंदी अनुवाद को देखकर डॉक्टर सर्वेपल्ली राधाकृष्णन ने काफी सराहना की थी। राधाकृष्णन जी ने कहा था कि हिंदी के बजाय इसका अंग्रेजी में अनुवाद क्यों नहीं किया? उन्होंने मुझे बताया था कि उस समय मेरे मन में इतना अधिक रोष उत्पन्न हुआ कि मैं दिखा देना चाहता था कि अंग्रेजी में अनुवाद इसलिए नहीं किया कि अंग्रेजी नहीं आती परंतु इसलिए कि हिंदी के लिए अधिक प्रेम है।' (डॉ. जगन्नाथ पाटिल, उपन्यासकार रांगेय राघव, शुभम पब्लिकेशन्स, कानपुर, 2021, पृ.सं.18)

रांगेय राघव का साहित्यिक व्यक्तित्व कई रूपों में हमारे समक्ष उपस्थित होता है, परंतु सर्वाधिक सशक्त और प्रभावशाली रूप उनका उपन्यासकार का है। उनका प्रत्येक उपन्यास अपनी एक विशिष्ट पहचान रखता है। सामाजिक उपन्यासों की शृंखला में 1961 ई. में प्रकाशित 'आग की प्यास' शीर्षक उपन्यास ग्रामीण परिवेश को आधार बनाकर लिखा गया है। लघु कलेवर में होने के बावजूद यह अपने भीतर समाहित उद्देश्य को पाठकों तक प्रेषित कर पाने में पूर्णतः सक्षम है। उपन्यास का उद्देश्य स्पष्ट है - धन रूपी आग की प्यास बुझाने के फेर में अंततः व्यक्ति को कुछ भी प्राप्त नहीं होता। धन की लालसा उसे अपनों से भी दूर ले जाती है। 'उपन्यास की मुख्य कथावस्तु अर्थकेंद्रित है। समाज के कुछ इने-गिने लोगों की धन की प्यास कैसे वृहत्तर समुदाय का जीवन नारकीय बनाती जा रही है, यह इस उपन्यास में प्रभावशाली ढंग से चित्रित हुआ है।' (रांगेय राघव, आग की प्यास, राजकमल पेपरबैक्स, 2000, आवरण पुष्ठ)

धन की कामना यदि किसी स्वार्थ के वशीभूत होकर की जाय तो वह उस व्यक्ति के नाश का कारण बनता है। यह निर्विवाद सत्य है कि आवश्यकता से अधिक धन व्यक्ति को लालची, दंभी और स्वार्थी बना देता है। इसका उदाहरण उपन्यासकार ने उपन्यास के मुख्य पात्र नागल के बौहरे लगनलाल (लगना) के माध्यम से प्रस्तुत किया है। गरीब ब्राह्मण लगना समय के साथ पैसेवाला और सूदखोर भी बन जाता है। वह सूद पर लोगों को रुपये देता है और अपने दबदबे को कायम रखने के लिए ठीक उसी दिन और समय पर प्रकट हो जाता है जो निर्धारित

होता है। किसी की परेशानी से उसे कोई मतलब नहीं है। उपन्यास की कथा के सोलह भाग मानो धन के पीछे भागने वाले लगनलाल की ही कथा है। बाकी पात्र उसके सहायक प्रतीत होते हैं। उपन्यास के पहले ही भाग में घनी बारिश में, भयानक कीचड़ से बौहरे का रुपये वसूलने के लिए दूसरे गाँव सँकली जाना उसके पक्के सूदखोर होने का प्रमाण देता है। जिस दिन आसामी कर्जा चुकाने का करार करे, अगर उसी दिन बौहरा न पहुँचा तो फिर भला उससे किसे भय होगा? 'लेखक ने घोर वर्षा के समय बौहरे की घटना को आरंभ में रखकर धन-मादकता वाली प्रकृति का ज्ञान करा दिया है। पाठकों की भावनाओं को स्पंदित करने के लिए लेखक प्रायः अपनी रचना में हृदय-विदारक तत्त्व का समावेश किया करते हैं। इस उपन्यास की विषय-प्रकृति ही ऐसी है कि यहाँ सहज रूप में इस तत्त्व का विशेष सन्निवेश हुआ है।' (डॉ. लालसाहब सिंह, डॉ. रांगेय राघव और उनके उपन्यास, अनुपमा प्रकाशन, बम्बई, 1972, पृ.सं.69)

लगना बचपन से ही अपने गुरु की पुत्री नरायनी के प्रति प्रेमासक्त है। परंतु गरीबी के कारण उसकी यह इच्छा अधूरी ही रह जाती है। नरायनी धनी जमींदार माधोलाल की दुल्हन बन जाती है। प्रेम में असफलता उसे धन कमाने के पीछे पागल कर देती है। समय का चक्र ऐसा घूमता है कि माधो जो जमींदार था वह नागल के बौहरे का कर्जदार बन जाता है। बौहरा भारी बारिश में भी माधो के घर अपने रुपये वापस लेने के लिए निर्धारित दिन पहुँच जाता है। माधव का पुत्र बीमार है। उसे पैसे की तंगी है। परंतु बौहरे को क्या? उसकी संवेदना धनोपार्जन के समक्ष शून्य हो चुकी है। वह लोगों का प्यार नहीं चाहता है बल्कि लोग उससे जब डरते हैं तब उसे खुशी महसूस होती है। वह धन के बल पर लोगों में खौफ उत्पन्न करने का इच्छुक है। उसके मन में उठने वाले विचार उसकी अदम्य इच्छा को व्यक्त कर देते हैं- 'मुझे प्यार नहीं चाहिए! डरो! मुझसे डरना सीखो! जब मुझे प्यार चाहिए था, तब मैं गरीब था। अब धन है, तो धन की शक्ति देखो। '(रांगेय राघव, आग की प्यास, राजकमल पेपरबैक्स, 2000, पृ.सं.34)। उसके जीवन में धनाभाव के कारण हुए कष्टों ने उसे झूठा, स्वार्थी, धूर्त्त, कपटी और लोभी बना दिया है। अधर्म की राह पर चलने वाले बौहरे को दूसरों का धर्म के मार्ग पर चलना अच्छा नहीं लगता।

माधो के प्रति बदले की भावना में सुलग रहा बौहरा उसकी दुधारू गाय के बछड़े जेंगरा को ऊँचाई से नीचे बहते पानी में धक्का दे देता है। वह अपने बचपन के मित्र रामदास को भी, जो धर्म की राह पर चलने वाला परोपकारी व्यक्ति है, लोगों की नजर में गिराने के लिए ऐसा कुचक्र रचता है कि गौहत्या का दोष उसके सिर पर आ जाता है। गौहत्या की घटना के संदर्भ में पंडित राधारमण के माध्यम से उपन्यासकार ने वैसे लालची और पाखंडी ब्राह्मणों पर तंज कसा है जो धर्म के नाम पर किसी की मजबूरी का फायदा उठाना बखूबी जानते हैं। पंडित राधारमण रामदास से कहते हैं-'पुलिस छोड़ सकती है तुम्हें मास्टर! लेकिन धरम नहीं छोड़ सकता। तुम्हें छह महीने तक मुँह छिपाकर जेंगरे की पूँछ लिए डोलना पड़ेगा, भीख माँगकर खाना होगा। गौहत्या का प्रायश्चित गंगास्नान भी नहीं है। है तुम्हारे पास इतना धन कि गौ के बराबर सोना बाँट सको ब्राह्मणों में?'(वही, पृ.सं. 41)। परंतु यह रामदास का सुकर्म और धर्म के पुण्यपथ पर चलने का सुपरिणाम ही था कि उसके माथे पर कलंक नहीं लगता।

लगना की लाख कोशिशों के बाद भी रामदास के लिए धर्म ही सर्वोपरि रहता है। इसी कारण गाँव में हैजा फैलने पर जहाँ एक-दूसरे की मदद करने के नाम पर ही लोग बीमारी के भय से भाग खड़े होते हैं, वहीं रामदास मानवीय धर्म को सर्वोपरि रखकर हैजा पीड़ितों की मदद करने में पीछे नहीं रहता। हैजे से लोगों की सुरक्षा के मद्देनजर वह गाँव के ठाकुर नरायनसिंह से मदद माँगता है कि शहर से सरकारी गाड़ी आकर गाँव के लोगों का टीकाकरण कर दे परंतु ठाकुर साहब को हैजे से मर रहे लोगों की परवाह ही नहीं है। ब्रिटिश राज के सुख के दिनों को याद करने में उन्हें अधिक आनंद है। हैजे से ही अपने नौकर के मर जाने से अधिक दुःख उन्हें अपने खाने की तकलीफ और अपने आराम न कर पाने से है। उपन्यासकार ने ठाकुर साहब के माध्यम से नेताओं की झूठ बोलने वाली आदत पर भी करारा व्यंग्य किया है। कथन द्रष्टव्य है–'झूठ मैं नहीं बोल पाता। और बोलता होता तो आज मैं मिनिस्टर होता, एक मिनिस्टर तो ज़रूर होता!'(वही,पृ.सं. 60)।

गाँव में हैजे की बीमारी से बढ़ती मौतों को देखकर रामदास गाँव में गंदगी हटाने के काम में लग जाता है। उसकी देखा-देखी कई लोग भी उक्त काम में जुट जाते हैं जिनमें बौहरा और माधो भी शामिल होते हैं। परंतु घर-घर होने वाली मौतों ने मानो इंसानों को ही कूड़ा-कचरा बना कर रख दिया होता है। लाशों की सड़ाँध और लोगों के रुदन से गाँव में मौत के खौफ का साम्राज्य दृष्टिगोचर होने लगता है। लाशों को कुत्तों और सियारों का निवाला बनते देखकर बौहरा और माधो लाशों को गाँव के बाहर फेंक आने का जिम्मा उठाते हैं। इस काम के पीछे उनकी नजर मरे हुए लोगों के धन पर होती है। लालची बौहरा माधो को उसका कर्ज उतारने के साथ-साथ धनी होने का लालच देता है। कहा भी जाता है कि समय और परिस्थिति इंसान से कुछ भी करवा पाने में समर्थ है। माधो अपनी चारित्रिक दुर्बलता के कारण बौहरे की लच्छेदार बातों में आकर लाशों से रुपये वसूलने जैसे घृणित कर्म में उसका जोड़ीदार बन जाता है परंतु गलत काम करने वालों को जल्द ही सजा भी मिल जाती है। मृत ठाकुर साहब का अकूत धन दोनों की आपसी उलझन का कारण बन जाता है जिसमें बौहरा कटार से माधो का काम तमाम कर देता है। माधो की पत्नी नरायनी अपने पति की लाश देखकर उसी कटार से आत्महत्या के लिए उद्यत हो जाती है परंतु बौहरा उसे रोक लेता है। वह नरायनी को अपने मन की भावनाओं से अवगत कराता हुआ कहता है-'तेरे लिए ही तो मैंने इतना खेल रचाया है। बचपन से तेरे लिए ही तो जी रहा हूँ बावरी.... तेरे बिना ही तो मुझे कुछ भी अपना नहीं लगता.... और तू ही मर रही है...तेरी देह को हाथ नहीं लगाना चाहता नरायनी! बस तुझे देखता रहना चाहता हूँ। बचपन से यही चाहना थी और अब भी यह आग मेरे मन में बुझी नहीं है। यह माधो.... यही तो तुझे मुझसे छीन लाया था... तू मेरी नहीं हो सकी.... पर मैं तेरा ही हूँ नरायनी....आज तक नहीं कह सका कभी....।' (वही, पृ.सं. 109)

बौहरे के मुख से ऐसी बात सुनकर नरायनी नफरत की भावना लिए उसे मारने कटार लेकर दौड़ पड़ती है। लोगों की भीड़ जुटी देखकर बौहरा स्वयं को बचाने के लिए नरायनी और मृतक ठाकुर साहब के बीच अवैध संबंध होने की झूठी बात बनाता है। वह दरोगा जी से जान-बूझकर मार भी खाता है और वहीं दूसरी ओर नरायनी

को बचाने के लिए प्राप्त सारे धन का चढ़ावा भी उन्हें चढ़ा देता है। पति माधो के कत्ल के आरोप में थाने में बंद नरायनी से बौहरा पुनः कहता है- 'सब कुछ किया नरायनी ! मैं अपने लिए नहीं जिया। तू एक ऐसे को ब्याही थी, जिसके पास मान-सम्मान-धन था। तेरे पास मैं धन के जरिए ही पहुँच सकता था। इसीलिए मैंने धन कमाया और तेरे पास आ गया।' (वही, पृ.सं. 118)। निःसंदेह बौहरे का चरित्र प्रेम और धन के बीच डगमग सा लगता है। भले वह दावा प्रेम के लिए धन कमाने का करता हो परंतु विपरीत समय आने पर वह स्वयं को ही बचाते दीख पड़ता है और नरायनी पर अपने लाभ के लिए चरित्रहीनता का आरोप लगाने से भी बाज नहीं आता। माधो की पुत्री शकुंतला को पूरा शक है कि उसके पिता का हत्यारा बौहरा ही है। गाँव में कुछ दिनों के बाद गिद्धों और कुत्तों से घिरी बौहरे की लाश की शिनाख्त होती है। पुलिस द्वारा खूनी को धर-पकड़ने की प्रक्रिया में लोगों में दहशत का माहौल उत्पन्न हो जाता है। पुलिस द्वारा रामदास के पकड़े जाने और मार पीट की सूचना पर शकुंतला निर्दोष रामदास को बचाने के लिए थानेदार के समक्ष अपना गुनाह कबूल कर लेती है कि बौहरे को उसने मारा है। परंतु रामदास और उसकी पत्नी दुर्गी दोनों अपने सिर इल्ज़ाम ले लेते हैं। शकुंतला निर्दोष मामा-मामी को हिरासत में देख विक्षिप्त-सी होकर एक भयानक वेग से बहते नाले में कूदकर अपने प्राणांत कर लेती है। वहीं दूसरी तरफ नरायनी की भी मौत हो जाती है। उपन्यास की कथा का समापन इसी बिंदु पर होता है।

उपन्यास के पात्रों के संदर्भ में बात की जाय तो एक बात स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है कि स्त्री पात्रों का चरित्रांकन पुरुष पात्रों की तुलना में अत्यंत प्रभावी और दृढ़ है। चाहे नरायनी की बात की जाय या फिर शकुंतला और दुर्गी की। वहीं पुरुष पात्रों में बौहरा, माधो, ठाकुर साहब, दारोगा जैसे लचीले चरित्र के पात्र पाठकों में क्षोभ जगाते हैं। पुरुष पात्रों में रामदास ही अकेला है जो अपने चारित्रिक दृढ़ता के बल पर पाठकों को प्रभावित करता है। उपन्यास की भाषा सहज और सरल है। कहीं-कहीं भाषा का सौंदर्य विस्मित कर देता है। यथा- 'भीगी हुई प्रकृति पर चाँदनी ऐसी दीख पड़ती थी जैसे कोई पीलिया के रोग से ग्रस्त कुमारी अभी स्नान करके उठी हो।' (वही, पृ.सं. 23)

'आग की प्यास' में बौहरे के चरित्र के माध्यम से उपन्यासकार ने यह स्पष्ट कर दिया है कि मनुष्य भले ही जीवित रहते धन के पीछे कितना भी भाग ले परंतु अंत में उसके साथ कुछ भी नहीं जाता। 'धन-संग्रह की प्रवृत्ति सत्य-असत्य, उचित-अनुचित की सीमा-रेखा समाप्त कर जीवन में अशांति उत्पन्न कर देती है। उस क्षण आदमी आदमी नहीं रह जाता, वह धन का नियामक नहीं, धन ही उसका नियामक हो जाता है।' (डॉ. लालसाहब सिंह, डॉ. रांगेय राघव और उनके उपन्यास, अनुपमा प्रकाशन, बम्बई, 1972, पृ.सं.69)। साथ ही उपन्यासकार यह सीख भी दे जाता है कि प्रेम को कभी भी छल या धन से प्राप्त नहीं किया जा सकता है। सच्चा प्रेम तो वह होता है जो अपने प्रेम के सुख में ही खुशी का अनुभव करता है। गलत इच्छाओं का परिणाम हमेशा गलत ही होता है। नरायनी को पाने की बौहरा की लालसा ही उसके अंत का कारण बनती है। धन के सहारे कभी भी प्रेम को खरीदा नहीं जा सकता है। उपन्यास में माधो, बौहरे, शकुंतला और नरायनी की मौत पाठकों में विक्षुब्धता और दुःख का संचार करती है। उपन्यास की कथा दुखांत है परंतु उसकी प्रभावोत्पादकता अक्षुण्ण है।☆

आलेख

# धन-लिप्सा के आगे बौनी होती है यशो-लिप्सा और स्त्री लिप्सा

- अनामिका जैन
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, जैन कन्यास पाठशाला पी.जी. कॉलेज,
मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश

17 जनवरी, 1923 में जन्मे रांगेय राघव का वास्तविक नाम तिरुमल्लै नंबाकम वीर राघव आचार्य है। वे हिंदी के उन विशिष्ट बहुमुखी और प्रतिभाशाली रचनाकारों में से हैं जिन्होंने अपनी अल्पायु में ही एक साथ उपन्यासकार, कहानीकार, निबंधकार, आलोचक, नाटककार, कवि, इतिहासवेत्ता एवं रिपोर्ताज लेखक के रूप में स्वयं को स्थापित किया है। उन्होंने 39 वर्ष की अल्पायु में ही अपनी अमूल्य लेखनी के माध्यम से हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है।

रांगेय राघव ने अपने जीवन काल में लगभग चालीस उपन्यास लिखे हैं। सन् 1962 में प्रकाशित उपन्यास 'पराया' में लेखक ने सामंतवादी पूँजीवादी संस्कारों और व्यवस्था के बीच में घुटते हुए समाज की दशा को उभारने का प्रयास किया है। इसमें लेखक ने बम्बई शहर की पृष्ठभूमि को आधार बनाकर उपन्यास का कथ्य गढ़ा है।

बम्बई शहर का नाम सुनते ही सबसे पहले मानस पटल में चकाचौंध से भरा एक ऐसा शहर उभरकर अंकित होता है जिसमें गगनचुंबी अट्टालिकाएँ, औसतन से चार-पाँच गुना आबादी का रहवास, तंग-गंदी चौल, मशीनी पुर्जा, सपनों में जीता-मरता आदमी, अमीर बनने की होड़, सही-गलत तरीकों से पैसे कमाने की चाह आदि। इसे सपनों का शहर भी कहा जाता है। यहाँ का जीवन एक निरंतर दौड़ है जिसमें किसी को भी संतुष्टि नहीं है, चाहे वह पैसा हो या शोहरत। बम्बई शहर के तंग-संकरी चौल का सटीक वर्णन लेखक के शब्दों में, 'यहाँ धूप भी बदबू को नहीं मिटा सकती। मेहनत करने वाले वे लोग, जो तुम्हारी दुनिया को सुंदर बनाते हैं, वहीं गरीबी की कैद में सड़ा करते हैं। यहाँ न कोई अपने खानदान की डींग हाँकता है, न धन की चमक से दूसरे को अंधा बना सकता है। यहाँ एक आदमी दूसरे आदमी को केवल इसलिए पहचानता है कि वे दोनों आदमी हैं।' (रांगेय राघव, पराया, पृ. 21-22)। बम्बई एक ऐसा शहर है जहाँ मनुष्य मुनाफे के लिए माल बनाता है, पैदा करता है, न कि मनुष्य की जरूरतों को पूरा करने के लिए। वस्तुतः धन की माया आती-जाती है। यहाँ पर व्यक्ति रात को करोड़पति और सुबह होते ही भिखारी बन सकता है। सड़क की भीख भी उसे नसीब नहीं होती है, ऐसा है बम्बई।

रमेश इस उपन्यास का मुख्य पात्र है जिसके इर्द-गिर्द शोभा, मालती और ममता नामक स्त्रियों की कहानी घूमती है। रमेश बम्बई के सेंट स्टीफन कॉलेज में पढ़ता है, जहाँ उसकी मुलाकात ममता नामक धनाढ्य युवती से

होती है। वह ममता से अपार प्रेम करता है। ममता के मन में भी रमेश के प्रति कोमल भावनाएँ हैं, लेकिन अमीरी-गरीबी की दीवार इस रिश्ते को अंतिम रूप नहीं दे पाती है।

रमेश की मंगेतर शोभा, जिसकी सगाई उसके पिता ने बचपन में रमेश के साथ कर दी थी। शोभा के माता-पिता की मृत्यु के बाद से ही वह रमेश की माँ की जिम्मेदारी बन गई थी। रमेश की माँ की तबीयत भी काफी अच्छी नहीं रहती थी। इसलिए वह चाहती थीं कि रमेश उससे विवाह करके उसे अपने साथ शहर ले जाए, लेकिन वह इस रिश्ते से खुश नहीं था।

रमेश की माँ जब काफी बीमार थी तो इलाज के लिए पैसों की आवश्यकता थी। शोभा, हरखू को जो रमेश के परिवार का शुभ चिंतक था, अपने सोने का ऐरन बेचने को देती है, ताकि डॉक्टर की फीस का इंतज़ाम हो सके। रमेश को जैसे ही इस बात का पता चलता है तो उसने परायेपन के स्वर में कहा कि ‘ लेकिन यह तो शोभा का है ?... उसकी चीज लेना ठीक होगा?’ (वही, पृ. 38)। उसके स्वर में परायेपन का अनुभव करके मानो शोभा का हृदय चूर-चूर हो गया। उसे पहली बार यह एहसास हुआ कि रमेश ने उसे अभी तक स्वीकार नहीं किया है। वह आज भी उसके लिए दूसरों के समान परायी है। माँ की मृत्यु के पश्चात् जब रमेश शोभा से कहता है कि सामान बाँध दो, तो शोभा उसके सामान के साथ-साथ अपना सामान भी बाँध लेती है। इस पर रमेश कहता है कि मैंने तो सिर्फ अपना सामान बाँधने को कहा था। यहाँ पर रमेश द्वारा दूसरी बार शोभा को परायेपन का एहसास कराया जाता है। उसने रमेश को समझाने का प्रयत्न भी किया कि अब तुम्हारे सिवा इस दुनिया में मेरा कोई सहारा नहीं है। ‘जैसे तुम चाहोगे मैं वैसे ही रहूँगी! .... मुझे धन नहीं चाहिए, मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैं तुम्हें चाहती हूँ, मेरे देवता...’(वही, पृ. 42)। लेकिन रमेश अपने संकल्प में अडिगता से कायम रहा। इस पर शोभा ने अपने प्यार की कुशल-कामना करते हुए कहा कि ‘जिसमें तुम्हें सुख मिले वही करो; क्योंकि तुम्हारे जीवन का सुख ही मेरा सुख है; लेकिन मुझे विश्वास है कि तुम आओगे। इसलिए मैं तुम्हें हँसकर बिदा करूँगी...’(वही, पृ. 43)। वह आगे कहती है कि ‘मैं प्रतीक्षा करती रहूँगी, मृत्यु तक राह देखती रहूँगी। मैं तुम्हें कभी नहीं भूलूँगी... ’(वही)। रमेश अपने दृढ़ संकल्प के साथ शहर वापस लौट जाता है। यहाँ पर शोभा का रमेश के प्रति अपनापन और रमेश का शोभा के प्रति परायेपन का दर्शन होता है ।

रमेश शहर इसी उम्मीद से वापस लौटता है कि ममता उसे उसकी गरीबी में भी अपना लेगी, लेकिन वह गलत था, क्योंकि ममता रमेश से दौलत में कई सीढ़ियाँ ऊपर है। वह धनाढ्य होने के साथ-साथ पाश्चात्य संस्कृति से बहुत प्रभावित है। उसे क्लब जाना जन्नत के समान लगता है। उसके लिए सारी जिंदगी का आराम वहीं है। क्लब ऐसी जगह है जहाँ धनी लोग आकर नितांत कृत्रिमता के साथ एक-दूसरे से गले मिलते हैं। साथ ही, जहाँ चमकते सिक्के या नोटों की गड्डी पर आपसी रिश्ते निर्भर होते हैं। ममता उसी कृत्रिमता का एक उदाहरण है। जब वह ममता से सारी जिंदगी उसके साथ चलने की बात पूछता है तो ममता कहती है, ‘चलूँगी। .... लेकिन

तुम्हारे सिर पर कहीं छत है? तुम्हारा कहीं ठिकाना भी है? याद रखो समुद्र के तैरने के लिए जहाज चाहिए।'(वही, पृ. 46)। ममता द्वारा कही गई इस बात के लिए रमेश तैयार नहीं था, लेकिन वह अब भली-भाँति समझ गया था कि इस दुनिया में सिर्फ दौलत का ही मूल्य है। दौलत से ही सब कुछ खरीदा जा सकता है, यहाँ तक कि रिश्ते भी। उसने मन-ही-मन निश्चय किया कि वह एक दिन एक बड़ा आदमी बनेगा। उसने ममता से वादा लिया कि 'जिस दिन मैं तुम्हारे द्वार पर आऊँगा, उस दिन तुम मुझे प्रतीक्षा करते हुई मिलोगी?'(वही, पृ. 46)। इस बात पर ममता ने सिर हिलाकर स्वीकृति तो दे दी, लेकिन जल्द ही ममता के व्यवहार में रमेश के प्रति उपेक्षा का भाव आ जाता है। उसकी नज़दीकियाँ अब बैरिस्टर बिहारीलाल, जोकि पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित पुरुष है, के साथ ज्यादा हो गई थीं। उन्हें अक्सर क्लब में एक साथ देखा जाता था, यहाँ तक कि प्रोफ़ेसर होल्कर के विवाह समारोह में भी ममता बैरिस्टर बिहारीलाल के साथ आती-जाती है। इस समारोह में वह पूरे समय रमेश की उपेक्षा करती है। यह बात रमेश को काफी आहत करती है ।

इस उपन्यास में मालती का चरित्र एक वेश्या के रूप में प्रस्तुत होता है। रमेश की मुलाकात मालती से मनोहर नामक व्यक्ति, जो रमेश के कॉलेज का आवारा और लोफर लड़का है, द्वारा होती है। मालती ही वह माध्यम है जो रमेश द्वारा ममता के अलगाव को भुलाने का सहारा बनती है। आगे चलकर मालती और रमेश के बीच नजदीकियाँ बढ़ जाती हैं। एक समय ऐसा भी आता है जब मालती रमेश के लिए अपना सब कुछ त्यागने को तैयार हो जाती है। वह उस पाप के धंधे तथा उस पाप की कमायी को सदैव के लिए त्यागकर अपने आगे का जीवन रमेश के साथ एक पत्नी के रूप में जीना चाहती है। वह रमेश में अपना भविष्य देखती है। इसीलिए वह रमेश से कहती है, 'औरत पैसा नहीं, दिल चाहती है। जब उसे प्यार मिलता है तब वह दुनिया की बड़ी से बड़ी मुसीबत झेल सकती है।'(वही, पृ. 55)। वह एक ऐसा व्यक्ति चाहती है जो उससे प्रेम करें, न कि उसके वेश्या होने पर उसे बात-बात पर अपमानित करे। 'पाप का धन मेरे पास बहुत है। मैं एक ऐसा आदमी चाहती हूँ, जो मुझे प्रेम करे। इसलिए मेरा अपमान न करें कि मैं वेश्या हूँ। .... मुझे इस पाप के जीवन से निकालकर ले चलो। किसी दूसरे शहर में हम पति-पत्नी के रूप में जा बसेंगे। मुझे धन और नाम नहीं चाहिए, मुझे शांति चाहिए, प्यार चाहिए.... चलो रमेश...'(वही, पृ. 56)। यहाँ पर मालती के लिए प्यार ही सर्वोपरि है, धन तुच्छ है। लेकिन रमेश धोखा देकर उसके पंद्रह हज़ार रुपये लेकर भाग जाता है। मालती एक स्वाभिमानी स्त्री थी। इसलिए वह वापस उस घृणित पेशे में लौटकर नहीं जाती, बल्कि मेहनत से धन कमाने का निश्चय करती है। वह ममता के घर नौकरानी का काम करने लगती है। इधर, शोभा का गाँव में रहना दूभर हो जाता है। ज़मींदार तथा गाँव का रसिक-वर्ग उस पर बुरी दृष्टि रखते हैं। थक-हारकर वह शहर जाकर रमेश की तलाश करने का निश्चय करती है। दुर्भाग्य से इतने बड़े शहर में रमेश तो नहीं मिलता है, लेकिन वह ममता के यहाँ एक नौकरानी की हैसियत से लग जाती है।

रमेश चंद पैसों की बदौलत गलत मार्ग में चलकर शीघ्र ही लखपति और लखपति से करोड़पति का सफर तय कर लेता है। वह एक बड़ा व्यापारी बन जाता है। आये दिन रमेश का चित्र अखबार के मुख-पृष्ठ की शोभा

बढ़ाया करता है। मालती और शोभा को इसी माध्यम से रमेश का पता चलता है। शोभा अपने पति का सामीप्य पाने के लिए आकुल हो उठती है। उसे यह बात अच्छी तरह से पता है कि धन-लिप्सा के आगे यश-लिप्सा और स्त्री- लिप्सा बौनी होती है, लेकिन उसे अभी भी रमेश की कुशल-कामना की चिंता है। वह रमेश के बंगले में एक बड़ा घूँघट निकालकर नौकरानी का काम माँगने जाती है और वहाँ उसे रख भी लिया जाता है। वह अब शोभा न होकर सबके लिए चंपा बन गई थी ।

इधर, ममता को मनोहर के माध्यम से रमेश का पता चलता है। दौलत में वह शक्ति है जो आदमी का दिमाग बदल सकती है। हर रिश्ता, हर संबंध पैसे के पैमाने से नापा जाता है। ममता एक ऐसी युवती है जो धन के पीछे भागती है। अब ममता बैरिस्टर बिहारीलाल को छोड़कर रमेश के पास लौटने को तैयार है, लेकिन उसे जल्द ही इस बात का पता चलता है कि वह बैरिस्टर बिहारीलाल के बच्चे की कुंआरी माँ बनने वाली है। बैरिस्टर बिहारीलाल को इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता है, लेकिन मालती को एक औरत होने के नाते इस बात का एहसास हो जाता है कि ममता किसी बात से बहुत ज्यादा परेशान है। उसके बार-बार पूछने पर ममता उसे अपनी माँ बनने वाली बात बताती है। इस बात पर मालती कहती है कि 'मालकिन डरो नहीं, तुम्हारा बच्चा मेरा बच्चा होगा। मुझे दे दें। मैं पाल लूँगी।'(वही, पृ. 123)। यहाँ पर ममता-मालती के बीच मालकिन-नौकरानी का रिश्ता एक भरोसे का, एक अपनेपन के रिश्ते को इंगित करता है। वहीं, शोभा को जब इस बात का पता चलता है कि रमेश ममता से शादी करने वाला है तो वह अपने को टूटा हुआ-सा और अकेला महसूस करती है। कोई भी पत्नी अपने पति को किसी पराई स्त्री के साथ कभी नहीं देख सकती, यह एक स्त्रैण स्वभाव है। शोभा रमेश को ममता के बारे में अप्रत्यक्ष तरीके से बतलाने का प्रयास करती है, क्योंकि वह उस घर में एक नौकरानी की हैसियत से काम करती है। शोभा जानती थी कि ममता अपवित्र है, कुटिल है। लेकिन वह चाहकर भी अपने मालिक रमेश को स्पष्ट शब्दों में ममता के बारे में नहीं बता सकती है।

एक दिन सुहावना मौसम होने के कारण रमेश ममता के साथ घूमने का प्लान बनाता है। ममता अपनी स्वीकृति देने के पश्चात् भी रमेश के घर न जाकर बैरिस्टर बिहारीलाल के साथ घूमने चली जाती है। यहाँ पर ममता द्वारा रमेश को धोखा देने के मंसूबे के दर्शन होते हैं। वह बैरिस्टर बिहारीलाल को अपने मंसूबे के बारे में बताती है कि वह तो सिर्फ रमेश से पैसे ऐंठना चाहती है। इधर, रमेश उसका अपने दरवाजे के बाहर बेसब्री से इंतजार करता है, जिस कारण वह भीग जाता है। भीगने के कारण बुखार आ जाता है। शोभा एक पत्नी की भाँति उसका रात भर जागकर ख्याल रखती है, जिस कारण वह शोभा से बहुत प्रभावित होता है। रमेश का शोभा से प्रभावित होने का दूसरा कारण यह भी है कि एक दिन मनोहर धोखे से रमेश के घर से एक महत्त्वपूर्ण फाइल ले जाने का प्रयास करता है, लेकिन शोभा अपनी होशियारी से फाइल मनोहर को नहीं देती। यदि वह फाइल मनोहर के हाथ लग जाती तो रमेश का दिवालिया निकल जाता। यह दोनों घटनाएँ रमेश को शोभा के काफी करीब ले आती हैं ।

जब मनोहर को रमेश के यहाँ असफलता प्राप्त होती है तो वह ममता के यहाँ चोरी के उद्देश्य से जाता है, लेकिन वहाँ मालती उसके मंसूबों को कामयाब नहीं होने देती। मनोहर के साथ हाथापाई में मालती बहुत बुरी तरह से जख्मी हो जाती है। अगले दिन रमेश को समाचार-पत्र के माध्यम से यह बात पता चलती है। मनोहर पुलिस की नजरों से बचकर रमेश के यहाँ शरण लेने आता है क्योंकि उसे यह बात अच्छी तरह से पता है कि पुलिस पैसे वालों के यहाँ आसानी से नहीं आती। शोभा अपनी होशियारी से तथा सबसे नजर बचाते हुए पुलिस को खबर कर देती है। मनोहर अपनी गिरफ्तारी से तिल-मिलाकर रमेश से कहता है कि 'तू जिस ममता पर रीझ रहा है, वह तेरी नहीं है। उसे बैरिस्टर तबाह कर चुका है।' (वही, पृ. 140)।

रमेश ममता के लिए इस तरह की बात सुनने को तैयार नहीं था। वह अपनी तसल्ली के लिए ममता के घर जैसे ही जाता है तो उसे दरवाजे पर किसी पुरुष की आवाज सुनाई देती है। शिष्टता के विरुद्ध वह चुपचाप उनकी बातों को सुनने लगता है। ममता चिल्लाते हुए उस पुरुष (बैरिस्टर बिहारीलाल ) से कहती है, 'कमीने ! तूने मुझे कहीं का भी नहीं छोड़ा। तूने मुझे बरबाद कर दिया। आज में गर्भवती न होती तो एक करोड़पति की बीवी होती।'(वही, पृ. 142)। रमेश जैसे ही पर्दा उठाता है तो देखता है कि ममता हाथ में पिस्तौल थामे हुए है। वह बिना क्षण गवायें बिहारीलाल पर गोली चला देती है। रमेश आवेग में कमरे में घुसते हुए ममता से कहता है कि 'अगर गोली बाकी हो तो एक मेरे ऊपर चलाकर मेरा भी पाप नष्ट कर दो। ... मैं एक गरीब आदमी था। तेरे लिए, सिर्फ धन और यश कमाए, लेकिन पत्थरदिल औरत ! तूने मुझसे झूठ कहा, मुझे धोखा दिया'। (वही, पृ. 143)। वह आगे कहता है कि 'तूने मुझे बरबाद कर दिया। तूने मुझे कहीं का न रखा। तेरे लिए मैंने अपने-आपको मिटा दिया, अपनी इंसानियत को कुचल दिया; गरीबों का लहू चूसता रहा, अपने दिल को मैंने पत्थर बना दिया'। (वही, पृ. 144)। गोली की तथा रमेश की जानी- पहचानी आवाज़ सुनते ही मालती बुरी तरह जख्मी हालत में खिसकते हुए कमरे में आती है, जहाँ रमेश मालती को इस लहू-लुहान से सनी हालत में तथा ममता के यहाँ एक नौकरानी की हैसियत से देखकर ग्लानी से भर जाता है। पल-पल क्षीण होती अपनी शक्ति को एकत्रित करते हुए मालती कहती है कि 'ममता समझती थी बैरिस्टर पापी है। तुम समझते हो ममता पापिन है, सच बताओ रमेश.... '(वही, पृ. 145)। वह आगे कहती है कि 'मैं जानती थी कि तुम इसी शहर में हो, मैं तुमसे मिलने आ सकती थी, पर आई नहीं। मैं जानती थी, तुम मुझसे डरोगे.... मैं तुम्हें डराना नहीं चाहती थी....तुमने वेश्या देखी है..... पर वेश्या का हृदय नहीं देखा.... जब वह प्यार करती है तो दुनिया की कोई शक्ति उसे झुका नहीं सकती।'(वही)। वह रमेश को बहुत धिक्कारती है और अंत में वह उसी के पैरों में अपने प्राण त्याग देती है क्योंकि वह रमेश से सच्चा प्यार करती थी। रमेश व्याकुल हृदय के साथ घर लौटता है। उसे अपनी हर चीज से घृणा होने लगती है जो उसने पाप की दौलत से कमायी थी। वह अपना संतुलन खो बैठता है और आवेग में आकर अपनी धन-संपत्ति में आग लगा देता हैं। रमेश पश्चाताप और आत्मग्लानि से भर उठता है। वह बड़बड़ाते हुए कहता है कि 'मालती, मुझे माफ कर ! शोभा, मुझे माफ कर ! मेरी सारी जिंदगी एक झूठ थी।'(वही, पृ.

149)। ममता रमेश के पीछे-पीछे अपने पापों की माफी माँगने जाती है, लेकिन वह आग की लपटों में आकर मर जाती है। तभी चंपा उर्फ शोभा की असलियत रमेश के सामने आ जाती है और दोनों के बीच अपने-पराये का भेद समाप्त हो जाता है। अंत में दरोगा रमेश को एक लड़की को आग में जलाने के कसूर में गिरफ्तार कर लेते हैं ।

निष्कर्ष रूप में हम देखते हैं कि शोभा के पास धन के नाम पर कुछ नहीं था, फिर भी वह सिर्फ प्यार को अहमियत देती है, दौलत को नहीं। मालती के पास पाप की कमायी-अपार दौलत थी, लेकिन वह भी प्यार को अहमियत देती है, दौलत को नहीं। ममता दौलत से लदी युवती है, लेकिन वह प्यार की बजाय, दौलत को ही अहमियत देती है। रमेश ने धन के अभाव में अपनी माँ को तथा ममता द्वारा ठुकराए जाने के दर्द को सहा था। इसलिए उसके अंदर ममता को पाने की तड़प इस कदर थी कि उसके लिए सही-गलत का कोई मोल नहीं था। उसको दौलत ने इतना नीच बना दिया था कि उसके सामने मालती और शोभा का प्यार भी तुच्छ था। यहाँ पर दौलत ने प्यार को पराजित कर दिया था।

रमेश मनुष्यता को भूलकर धन का दास हो गया है। शोभा त्याग की मूर्ति है, जो भारतीय नारी के आदर्श के रूप में प्रस्तुत है। मालती वेश्या होकर भी अपने उत्कृष्ट विचारों के कारण पाठकों की सहानुभूति पा जाती है। ममता स्वार्थी और कपटी महिला है, धन के लिए अपना ईमान बेच सकती है। धन की लिप्सा मनुष्य को कितना निर्दयी बना देती है - यह इस उपन्यास का मूल कथ्य है। ☆

**कविता** विश्व पर्यावरण दिवस 5 जून पर विशेष

## पृथ्वी-रोदन

–हरिवंशराय बच्चन

सब ग्रह गाते, पृथ्वी रोती।
ग्रह-ग्रह पर लहराता सागर
ग्रह-ग्रह पर धरती है उर्वर,
ग्रह-ग्रह पर बिछती हरियाली,
ग्रह-ग्रह पर तनता है अम्बर,
ग्रह-ग्रह पर बादल छाते हैं,
ग्रह-ग्रह गाते, पृथ्वी रोती।

पृथ्वी पर भी नीला सागर,
पृथ्वी पर भी धरती उर्वर,
पृथ्वी पर भी शस्य उपजता,
पृथ्वी पर भी श्यामल अंबर,
किंतु यहाँ ये कारण रण के देख
धरणि यह धीरज खोती।

सूर्य निकलता, पृथ्वी हँसती,
चाँद निकलता, वह मुस्काती,
चिड़ियाँ गातीं सांझ सकारे,
यह पृथ्वी कितना, सुख पाती;
अगर न इसके वक्षस्थल पर
यह दूषित मानवता होती
सब ग्रह गाते, पृथ्वी रोती।

# दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास
# पाठ्य पुस्तक-सूची

**प्राथमिक**
प्राथमिक पाठ्य पुस्तक.................... रु. 130.00
**मध्यमा**
मध्यमा पाठ्य पुस्तक.................... रु. 150.00
**राष्ट्रभाषा**
राष्ट्रभाषा पाठ्य पुस्तक................. रु. 220.00
**प्रवेशिका (पुराना पाठ्यक्रम)**
**(प्रथम पत्र)**
नवीन पद्य चयनिका -1 ................ रु. 60.00
नवीन गद्य चयनिका -1 ................ रु. 85.00
**(द्वितीय पत्र)**
सत्य का स्वर ............................. रु. 60.00
सत्यमेव जयते (संवर्धित) ................ रु. 60.00
हिंदी व्याकरण प्रवेशिका-1 ............. रु. 33.00
**(तृतीय पत्र)**
हिंदी रत्नाकर............................. रु. 85.00
**प्रादेशिक भाषा – तेलुगु**
गद्य मंदारम................................. रु. 50.00
काव्य मंजरी................................ रु. 35.00
**प्रवेशिका (नया पाठ्यक्रम)**
प्रवेशिका पाठ्य पुस्तक 1, 2 & 3 रु. 400.00
प्रवेशिका तेलुगु रु. 60.00
**राष्ट्रभाषा विशारद पूर्वार्द्ध**
**(प्रथम पत्र)**
नवीन गद्य चयनिका - 2.................. रु. 110.00
निर्मला...................................... रु. 110.00
नवीन कहानी कलश ...................... रु. 100.00
**(द्वितीय पत्र)**
नवीन हिन्दी व्याकरण..................... रु. 85.00
व्यावहारिक हिन्दी न्यू..................... रु. 65.00
हिन्दी निबंध संकलन..................... रु. 60.00
अनुवाद अभ्यास-5 न्यू.................. रु. 50.00
**तृतीय पत्र**
**प्रादेशिक भाषा – तेलुगु**
गद्य चंद्रिका................................. रु. 45.00
काव्य कुसुमावली ......................... रु. 45.00
**राष्ट्रभाषा विशारद उत्तरार्द्ध**
**(प्रथम पत्र)**
नवीन पद्य चयनिका - 2................ रु. 145.00
पंचवटी.................................... रु. 80.00
**(द्वितीय पत्र)**
ध्रुवस्वामिणी ................................रु. 60.00
प्राचीन भारत का इतिहास................ रु. 75.00
सूर्योदय (प्रकाशन-द.भा.हिं.प्र. सभा).... रु. 120.00
**तृतीय पत्र – मौखिक**
लिखावट के नमूने
प्रश्न माला के साथ........................ रु. 35.00

**राष्ट्रभाषा प्रवीण पूर्वार्द्ध**
**(प्रथम पत्र)**
नवीन गद्य चयनिका - 3................ रु. 110.00
स्कन्दगुप्त (नाटक)...................... रु. 100.00
निबंध सौरभ................................ रु. 100.00
ग़बन न्यू ................................... रु. 130.00
**(द्वितीय पत्र)**
हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास .... रु. 110.00
दक्षिण में हिन्दी प्रचार आंदोलन का इतिहास.............................. रु. 120.00
दक्षिणी कथाएँ (परिवर्द्धित).............. रु. 100.00
**(तृतीय पत्र)**
**प्रादेशिक भाषा – तेलुगु**
व्यास मंजूषा................................ रु. 25.00
काव्य माला(प्रकाशक : द.भा.हिं.प्र.स. आंध्र) रु. 18.00

**राष्ट्रभाषा प्रवीण उत्तरार्द्ध**
**(प्रथम पत्र)**
रश्मिरथी.................................. रु. 100.00
नवीन पद्य चयनिका-3................. रु. 120.00
प्राचीन पद्य चयनिका .................. रु. 135.00
**(द्वितीय पत्र)**
काव्य के रूप ............................... रु. 110.00
काव्य शास्त्र ............................... रु. 65.00
भाषा विज्ञान .............................. रु. 120.00
**(तृतीय पत्र)**
त्रिपथगा (निबंध संग्रह)................. रु. 60.00
प्रयोजन मूलक हिन्दी (सभा प्रकाशन)..... रु. 100.00
अनुवाद अभ्यास - 6................. रु. 35.00
**(मौखिक)**
लिखावट के नमूने प्रश्न माला के साथ... रु. 35.00

**POST GRADUATE AND RESEARCH INSTITUTE**

**DAKSHINA BHARAT HINDI PRACHAR SABHA, MADRAS**

Declared by Parliament as an Institution of National Importance by Act 14 of 1964

**Accredited with 'B+' Grade by NAAC**

All B.Ed./M.Ed. Colleges are Recognised by NCTE, SRC, NEW DELHI

**ADMISSION NOTIFICATION 2023 – 2024**

1. **B.Ed. (Hindi Medium) : Two Years :**

   **ELIGIBILITY** : (10+2+3 Pattern) Candidates with atleast 50% marks either in the Bachelor's Degree or any other qualification equivalent thereto, are eligible to seek admission as per the NCTE Norms.

2. **M.Ed. (Hindi Medium)** : **Two years** : Only at **Dharwad, Karnataka**

   **ELIGIBILITY** : (10+2+3+2 Pattern) Candidates with 50% marks in Courses like B.A./B.Ed., B.Sc./B.Ed., M.A./B.Ed., M.Sc./B.Ed., B.Ed. (Integrated) Courses. B.El.Edn. with Hindi as one of the subjects are eligible to seek admission as per the NCTE Norms.

   Relaxation for SC/ST/OBC/PWD and other categories in the percentage of eligibility condition for both B.Ed. and M.Ed. courses shall be as per the State Government rules.

   Admission is open in all the **11 B.Ed. Colleges** run by DBHP Sabha in the States : Tamil Nadu, Andhra Pradesh, Karnataka & Kerala. **Colleges at** : **CHENNAI, HYDERABAD, VIJAYAWADA, VISAKHAPATNAM, BANGALORE, BELGAUM, VIJAYPUR, DHARWAD, MYSORE, ERNAKULAM, NILESHWARAM.**

**For Application and Prospectus : Rs. 600/-**

**Last date for submission of filled up Application : 30-08-2023**

**Applicants may contact directly to the concerned college.**

**Principal B.Ed., Chennai : 044-24341824- Extn, 123**

**Secretary, Andhra Branch : 040-23316865/23314949**

**Secretary, Karnataka Branch : 0836 – 2747763/2435495**

**Secretary, Kerala Branch : 0484 – 2377766/2375115**

Duly filled–in application form shall be submitted to the concerned college Principals in the respective States.

*Admission Application forms are available on Sabha's website : **www.dbhpscentral.org***

**REGISTRAR**

**POST GRADUATE AND RESEARCH INSTITUTE**
**DAKSHINA BHARAT HINDI PRACHAR SABHA, MADRAS**
Declared by Parliament as an Institution of National Importance by Act 14 of 1964
Accredited with 'B+' Grade by NAAC

**ADMISSION NOTIFICATION 2023– 2024**

Applications are invited for the following Regular & Part Time Courses in Hindi at

**HYDERABAD/DHARWAD/ERNAKULAM/CHENNAI CENTRES**

**REGULAR COURSES**

**M.A. (Semester System)** PART TIME : P.G. Dip. in Translation / Hindi Journalism

**M.A. (Hindi) Language & Literature : Two years**
**ELIGIBILITY :** i) A pass in B.A./B.Sc./B.Com. (10+2+3 Pattern) with Hindi as a Subject (OR) ii) A Pass in B.A./B.Sc./B.Com. (10+2+3 Pattern) with a Pass in R.B. Praveen OR its equivalent Hindi Examination recognized by the Sansthan.
State Reservation Policy will be followed.

**PART TIME COURSES (One Year)**

1. P.G. Diploma in Translation
2. P.G. Diploma in Hindi Journalism

**ELIGIBILITY :** 1. A Pass in B.A./B.Sc./B.Com. (10+2+3 Pattern) with Hindi as a Subject or a Pass in R.B. Praveen OR its equivalent Hindi Examination recognized by the Sansthan.

**Application Forms/Prospectus M.A., P.G.D.T., P.G.D.J. : Rs. 600/-**

*Admission Application forms are available on Sabha's website: www.dbhpscentral.org*
Last date for submission of filled up Application : 11-07-2023
Applicants may contact directly to the concerned P.G. Centres.

The Prof. & Head : P.G. Centre, DBHP Sabha, CHENNAI – 8555051958; P.G. Centre, DBHP Sabha, HYDERABAD, (ANDHRA PRADESH&TELENGANA) 9945664379; P.G. Centre, DBHP Sabha, DHARWAD, KARNATAKA – 70190 87077; P.G. Centre, DBHP Sabha, ERNAKULAM, KERALA – 97461 56060

**REGISTRAR**

---

**दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास**

**प्रवेशिका के लिए नया पाठ्यक्रम**

प्रचारक बंधुओं को सादर प्रणाम। आपको यह सूचित करते हुए हर्ष का अनुभव कर रहे हैं कि सभा की प्रवेशिका पाठ्यक्रम के लिए संशोधित एवं परिवर्द्धित पुस्तकें मुद्रित होकर तैयार हो चुकी हैं। पुस्तकों का विवरण इस प्रकार है :- **प्रवेशिका पाठ्य पुस्तक 1 , 2 , 3 (व्याख्यानमाला सहित)**

इन पुस्तकों को प्रचारकों एवं विद्यार्थियों की सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए तैयार किया गया है। प्रचारकों से विनम्र निवेदन है कि विद्यार्थियों को पाठ्य पुस्तक पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करें।

यह भी सूचित करना चाहते हैं कि **पुराना पाठ्यक्रम सितंबर 2023 की परीक्षा तक** व्यवहार में रहेगा।

इन **नए पाठ्य पुस्तकों के अंत में परीक्षा आवेदन पत्र भी होगा। 2024 फरवरी से प्रवेशिका परीक्षा** के लिए **इसी आवेदन पत्र का प्रयोग करना अनिवार्य** है।

पुस्तकें सभी शाखा कार्यालय एवं सेवा केंद्रों में उपलब्ध हैं। **सचिव**

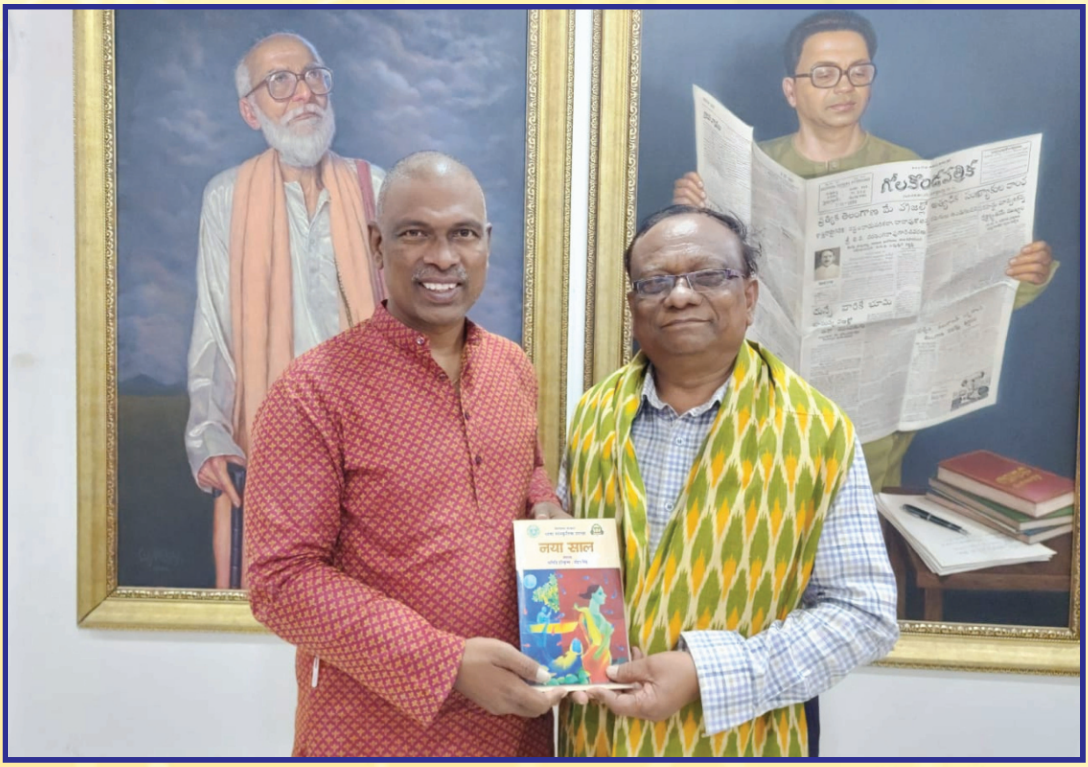


## अभिनंदन

तेलंगाना स्थापना दिवस के एक दशक होने के उपलक्ष्य में रवींद्रभारती सभागार में तेलंगाना साहित्य अकादमी की ओर से 11 जून, 2023 को समारोह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर बहुभाषी कवि गोष्ठी संपन्न हुई। साहित्य अकादमी के चेयरमैन जूलूरु गौरीशंकर तथा भाषा सांस्कृतिक शाखा के निदेशक मामिडि हरिकृष्ण ने षेक महम्मद खासिम (प्रबंध निधिपालक, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, आंध्र प्रदेश तथा तेलंगाना) का सम्मान किया।

**ISSN 2582-0885**
**SRAVANTHI**
RNI3108/58
June 2023

Registered News Paper

*To*

................................................................................................

................................................................................................

................................................................................................

*If not delivered, please return to:*

Dakshina Bharat Hindi Prachar Sabha – Andhra Pradesh & Telangana
**(Provincial Branch of Dakshin Bharat Hindi Prachar Sabha, Madras)**
(Declared by Parliament as an Institution of National Importance by Act 14 of 1964)
**P.B. No.23, Khairatabad, Hyderabad - 500 004.**

न्यायालय से भी बढ़कर और एक न्यायालय है, वह है ‘अंतरात्मा का न्यायालय’

- महात्मा गांधी

Edited, Printed and Published by G. Selvarajan on behalf of the D.B. Hindi Prachar Sabha - Andhra Pradesh & Telangana Khairatabad, Hyderabad - 500 004 and Printed at Hindi Prachar Press, T. Nagar, Chennai - 600 017.